भाद्र मास, कृष्ण पक्ष 20 वर्ष, अंक 326 पृष्ठ 8 मूल्य 1.00

अखंड भारत संदेश

www.akhandbharatsandesh.net

प्रयागराज से प्रकाशित

नगर संस्करण प्रयागराज शनिवार 11 दिसम्बर 2021

विश्व निर्माण एवं मानव विकास को दुतगति प्रदान करने हेतु क्रियायोग आश्रम एवं अनुसंधान आश्रम की अनुपम भेंट

क्रियायोग संदेश

क्रियायोग आश्रम एवं अनुसंधान संस्थान प्रयागराज

क्रिया योगः साँच (सच Truth) को आँच नहीं। आँच अज्ञानता (अविद्या Ignorance) समय, दूरी व सापेक्षता की अनुभूति है जो समस्त दुःखों का कारण है। अध्यात्मिक वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि सामान्य तरीके से जीवन जीने पर सच की अनुभूति के लिए व्याधि रहित लगभग दस लाख वर्ष की आवश्यकता होती है, लेकिन क्रियायोग अभ्यास से सच की अनुभूति एक ही जन्म में सम्भव है।

1. प्राचीन उच्च मानव सभ्यता मे वर्णित यज्ञ, वर्तमान में विश्व विख्यात 'क्रियायोग' है।
2. क्रियायोग अभ्यास वेदपाठ है, पूर्ण ज्ञान की अनुभूति है।
3. क्रियायोग अभ्यास ईश्वर अनुभूति है।
4. क्रियायोग अभ्यास अतीत, वर्तमान व भविष्य से जुड़ना है।
5. क्रियायोग अभ्यास जीवन मृत्यु पर विजय है।

क्रियायोग से सभी प्रकार की समस्याओं का समाधान सुनिश्चित।

10 मिनट का अभ्यास 20 वर्ष का विकास

दिल्ली दंगे : पुलिसकर्मी पर बंदूक तानने वाले शाहरुख पठान को पनाह देने वाला कलीम भी दोषी करार

नईदिल्ली। दिल्ली की एक अदालत ने शाहरुख पठान को दोषी ठहराए जाने के बाद उसे शरण देने के वाले एक व्यक्ति को भी दोषी ठहराया है, जब वह पिछले साल उत्तर-पूर्वी दिल्ली में हुए दंगों के दौरान एक पुलिसकर्मी पर कथित रूप से बंदूक तानकर फरार हो गया था। पुलिस के अनुसार, शाहरुख पठान ने कथित तौर पर 24 फरवरी 2020 को दिल्ली पुलिस के हेड कॉन्स्टेबल दीपक दहिया को मारने के इरादे से उन पर पिस्तौल तान दी थी। इस घटना की तस्वीरें सोशल मीडिया पर वायरल होने के बाद पठान फरार हो गया था और उसे 3 मार्च, 2020 को उत्तर प्रदेश के शामली जिले के बस स्टैंड से गिरफ्तार किया गया था। वह फिलहाल तिहाड़ जेल में बंद है। पुलिस ने दावा किया कि पठान ने फरार होने के बाद दोषी कलीम अहमद के शामली स्थित घर में शरण ली थी, जिसकी उनके मोबाइल फोन लोकेशन से पुष्टि होती है। पुलिस के अनुसार, पठान 26-27 फरवरी से 3 मार्च की रात तक अहमद के घर पर रहा। अहमद ने दंगा आरोपी को नया मोबाइल फोन खरीदने में भी मदद की थी।

न्यायाधीश ने कहा कि कलीम अहमद के वकील की उपस्थिति में उसे हिंदी भाषा में आरोपों के बारे में बताया गया और आरोपी ने स्वेच्छा से अपने खिलाफ लगाए गए आरोप को स्वीकार किया। न्यायाधीश 16 दिसंबर को उसे सजा देने के मुद्दे पर दलीलें सुनेंगे। इस धारा के तहत अधिकतम सजा सात साल तक की जेल और जुमार्ना है। गौरतलब है कि फरवरी 2020 में नागरिकता (संशोधन) अधिनियम के समर्थकों और उसके प्रदर्शनकारियों के बीच उत्तर-पूर्वी दिल्ली में सांप्रदायिक झड़पें हुई थीं। इस हिंसा के बाद कम से कम 53 लोग मारे गए और 700 से अधिक घायल हो गए।

जनता के साथ, जनता में समाहित, लोकतंत्र की सबसे प्रसिद्ध परिभाषा : पीएम मोदी

नई दिल्ली। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने शुक्रवार को सोशल मीडिया और क्रिप्टोकरेंसी जैसी उभरती टेक्नॉलजी के लिए वैश्विक नियम बनाने को लेकर संयुक्त प्रयास किए जाने की अपील की, ताकि उनका उपयोग लोकतंत्र को कमजोर करने के बजाय उसे मजबूत करने में किया जाए। अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडन की मेजबानी वाले लोकतंत्र सम्मेलन को डिजिटल माध्यम से संबोधित करते हुए मोदी ने कहा कि स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव कराने के अपने अनुभव साझा करने में भारत को खुशी होगी।

पीएम मोदी ने अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन की ओर से दिए गए लोकतंत्र की परिभाषा को विस्तार देते हुए कहा कि ''लोकतंत्र सिर्फ जनता का, जनता के द्वारा, जनता के लिए ही नहीं है, बल्कि जनता के साथ, जनता में समाहित भी है।'' प्रधानमंत्री ने कहा कि बहु-दलीय चुनाव, स्वतंत्र न्यायपालिका और स्वतंत्र मीडिया जैसी संरचनात्मक विशेषताएं लोकतंत्र के महत्वपूर्ण तत्व हैं। उन्होंने कहा, ''हालांकि, लोकतंत्र की बुनियादी मजबूती हमारे नागरिकों और समाज में निहित भावना और लोकाचार है।'' मोदी ने अपने संबोधन की शुरूआत करते हुए कहा कि वह सम्मेलन में विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का प्रतिनिधित्व कर गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं।

उन्होंने कहा, ''लोकतांत्रिक भावना हमारे सभ्यागत लोकाचार का अभिन्न हिस्सा है।'' प्रधानमंत्री ने कहा कि सदियों का औपनिवेशिक शासन भारत के लोगों की लोकतांत्रिक भावना को नहीं दबा सका। पीएम ने आगे कहा, ''इसे भारत की आजादी के साथ फिर से पूर्ण अभिव्यक्ति मिली और इसने पिछले 75 वर्षों में लोकतांत्रिक राष्ट्र निर्माण की एक असाधारण गाथा रची।'' उन्होंने कहा, ''यह सभी क्षेत्रों में अभूतपूर्व सामाजिक-आर्थिक समावेश की एक गाथा है। यह अकल्पनीय पैमाने पर स्वास्थ्य, शिक्षा और मानव कल्याण में निरंतर प्रगति की गाथा है।'' मोदी ने कहा, ''भारत की गाथा विश्व को यह एक स्पष्ट संदेश है कि लोकतंत्र सफल हो सकता है, लोकतंत्र सफल रहा है और लोकतंत्र सफलतापूर्वक काम करता रहेगा।

महाराष्ट्र में तेजी फैल रहा ओमिक्रॉन, मुंबई और पुणे में 7 और मरीज मिले

मुंबई। महाराष्ट्र में कोरोना के नए वेरिएंट ओमिक्रॉन के केस तेजी से बढ़ रहे हैं। राज्य में शुक्रवार को इस वेरिएंट से संक्रमित 7 और मरीज मिले हैं। इसके साथ ही यहां ओमिक्रॉन के मरीजों की कुल संख्या बढ़कर 17 हो गई है। महाराष्ट्र के स्वास्थ्य विभाग की ओर से बताया गया है कि ओमिक्रॉन के 3 नए केस मुंबई में सामने आए हैं तो पुणे के पिंपरी चिंचवड़ नगर निगम में 4 मरीजों में दक्षिण अफ्रीकी वेरिएंट मिला है। संक्रमितों में 3 साल की एक बच्ची भी शामिल है। इसके बाद देश में नए वेरिएंट से कुल संक्रमितों की संख्या 32 हो गई है। वहीं, इससे पहले महाराष्ट्र के उपमुख्यमंत्री अजीत पवार ने कहा कि पुणे में पिछले दिनों संक्रमित पाए गए 7 लोगों में से 5 की रिपोर्ट निगेटिव आ गई है, जबकि दो अन्य की स्थिति स्थिर है।

बैखौफ आतंकी ! कश्मीर के बांदीपोरा में किया हमला, पुलिस के दो जवान शहीद

श्रीनगर। जम्मू-कश्मीर के बांदीपोरा जिले में आतंकवादियों ने पुलिसकर्मियों पर हमला किया है। इस हमले में दो पुलिसकर्मियों मोहम्मद सुल्तान और फयाज अहमद शहीद हो गए हैं।

आतंकियों ने उस वक्त यह हमला किया, जब पुलिस टीम बांदीपोरा जिले में स्थित गुलशन चौक पर तैनात थी। इस घटना के बाद इलाके को घेर लिया गया है और आतंकवादियों की तलाश कीजा रही है। फिलहाल इस बारे में और अधिक जानकारी का इंतजार है। बांदीपोरा में शुक्रवार शाम गुलशन चौक पर आतंकवादियों ने पुलिस टीम पर अचानक फायरिंग कर दी। गोलीबारी में दो पुलिसकर्मी घायल हो गए। इन्हें तुरंत नजदीकी अस्पताल में भर्ती कराया गया, जहां उनकी मौत हो गई। सुरक्षाबलों ने इलाके को घेर लिया है और आतंकियों की तलाशी की जा रही है। इससे पहले 8 नवंबर को श्रीनगर के बटमालू इलाके में आतंकियों ने गोली मारकर 29 साल के एक पुलिसकर्मी की हत्या कर दी थी। जम्मू-कश्मीर की ग्रीष्मकालीन राजधानी में रविवार को एक आतंकवादी ने कायराना हमले में पुलिसकर्मी को शहीद कर दिया।

मलिक पर मानहानि केस में बोला हाई कोर्ट

समीर वानखेड़े सरकारी अफसर हैं, कोई भी कर सकता है काम की समीक्षा

मुंबई। एनसीबी के क्षेत्रीय निदेशक समीर वानखेड़े सरकारी अधिकारी हैं और कोई भी उनके कामकाज की समीक्षा कर सकता है। वानखेड़े के पिता की ओर से एनसीपी नेता नवाब मलिक के खिलाफ दायर मानहानि के मुकदमे की सुनवाई के दौरान बुधवार को बॉम्बे हाई कोर्ट ने यह बात कही। समीर वानखेड़े के पिता ध्यानदेव वानखेड़े ने मलिक से 1.25 करोड़ रुपये की मुआवजा राशि और वानखेड़े परिवार के खिलाफ भविष्य में कोई भी फर्जी या गलत टिप्पणी करने से रोकने के लिए कोर्ट से आदेश की मांग की है। उद्धव सरकार में मंत्री नवाब मलिक ने कई बार प्रेस कॉन्फ्रेंस कर समीर वानखेड़े पर ताबड़तोड़ आरोप लगाए हैं। इनमें से एक सरकारी नौकरी पाने के लिए फर्जी जन्म प्रमाणपत्र बनवाने का आरोप भी शामिल है। सुनवाई के दौरान ध्यानदेव वानखेड़े के अधिवक्ता अरशद शेख ने सवाल किया कि समीर को ऐसे व्यक्ति को स्पष्टीकरण क्यों देना चाहिए जो 'सिर्फ एक विधायक है कोई अदालत नहीं।' इस पर जस्टिस माधव जामदार ने कहा, 'आप सरकारी अधिकारी हैं। आपको सिर्फ इतना साबित करना है कि ट्वीट (मलिक द्वारा किए गए ट्वीट) पहली नजर में गलत हैं। आपके पुत्र सिर्फ एक व्यक्ति नहीं हैं बल्कि वह एक सरकारी अधिकारी हैं और जनता का कोई भी सदस्य उनकी समीक्षा कर सकता है। वहीं दूसरी ओर अदालत ने मलिक के वकील अतुल दामले से सवाल किया, 'क्या जमा करने से पहले दस्तावेजों का सत्यापन करना आपकी जिम्मेदारी नहीं है? क्या आपने एक जिम्मेदारी नागरिक और राष्ट्रीय राजनीतिक पार्टी के प्रवक्ता होने के नाते दस्तावेजों का सत्यापन किया?' मलिक के आरोप झूठ हैं यह साबित करने के लिए अतिरिक्त हलफनामा दायर करने के लिए वानखेड़े के वकील ने और समय मांगा।

पंचतत्व में विलीन हुए सीडीएस बिपिन रावत और पत्नी मधुलिका

नईदिल्ली। जब तक सूरज चांद रहेगा, बिपिन जी का नाम रहेगा...। अमरता के इन नारों और 17 तोपों की सलामी की गूंज के बीच देश के पहले चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ जनरल बिपिन रावत और उनकी पत्नी मधुलिका रावत पंचतत्व में विलीन हो गए। दोपहर दो बजे दिल्ली के 3, कामराज मार्ग स्थित उनके घर से निकली अंतिम यात्रा में हजारों लोग हमसफर बने। आंखें नम थीं, लेकिन वीरता का गर्व भी था और उसके सम्मान में पुष्पवर्षा करते रहे। मां भारती के वीर सपूत के लिए नारे लगाते रहे। सीडीएस रावत और उनकी पत्नी को उनकी बेटियों कृतिका और तारिणी ने रुढ़ियों को तोड़ते हुए मुखाग्नि दी। यही नहीं जनरल बिपिन रावत और उनकी पत्नी के शव भी एक साथ ही चिता पर रखे गए थे।

इस मौके पर जनरल बिपिन रावत के छोटे भाई का परिवार, मधुलिका रावत की फैमिली के लोग भी मौजूद थे। यही नहीं बड़ी संख्या में सैनिकों के परिवार, राजनीतिक हस्तियां, कई देशों के सेनाध्यक्ष और राजनियक भी मौजूद थे। जनरल बिपिन रावत किस कद के सैन्य अधिकारी थे, इसका अंदाजा इस बात से ही लगाया जा सकता है कि इजरायल, अमेरिका, फ्रांस और रूस समेत कई देशों ने उनकी मौत पर शोक जाहिर किया। यही नहीं उनके निधन को अपने एक गहरे दोस्त को खोने जैसा बताया था।

बुधवार को दोपहर 12:08 बजे तमिलनाडु के नीलगिरि जिले के कुन्नूर हुए हेलिकॉप्टर क्रैश में सीडीएस जनरल बिपिन रावत, पत्नी मधुलिका रावत और 11 अन्य सैन्य अफसरों की मौत हो गई थी। विमान में कुल 14 लोग सवार थे।

बेटियों ने दी मुखाग्नि, 17 तोपों की सलामी

नई दिल्ली। तमिलनाडु में हुए हेलिकॉप्टर हादसे में मृत सीडीएस जनरल बिपिन रावत, उनकी पत्नी मधुलिका रावत का कुछ देर में अंतिम संस्कार होगा। दोपहर 2 बजे के करीब जनरल बिपिन रावत और उनकी पत्नी की अंतिम यात्रा उनके 3, कामराज स्थित घर से शुरू हुई थी। यह अंतिम यात्रा फिलहाल दिल्ली कैंट पहुंच गई है। यहां सेना के टॉप अधिकारियों, कुछ पड़ोसी देशों के सेनानायकों ने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की है। इससे पहले सुबह जनरल बिपिन रावत के घर पर यूपी के सीएम योगी आदित्यनाथ, सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस एनवी रमन्ना, किसान नेता राकेश टिकैत जैसी हस्तियां पहुंचीं और उन्होंने श्रद्धांजलि अर्पित की। इस दौरान कांग्रेस नेता राहुल गांधी, तमाम केंद्रीय मंत्रियों, समाजवादी पार्टी के संस्थापक मुलायम सिंह यादव समेत कई हस्तियों को देखा गया।

विंग कमांडर की पत्नी को नौकरी और 50 लाख रुपये देगी यूपी सरकार

आगरा। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने कहा कि विंग कमांडर पृथ्वी सिंह चौहान की पत्नी को सरकारी नौकरी दी जाएगी। उनके नाम पर सड़क या संस्था का नाम रखा जाएगा। इसके अलावा पिता सुरेंद्र सिंह चौहान को राज्य सरकार की ओर से 50 लाख रुपये की सहायता प्रदान की गई है। सीएम शुक्रवार को दिल्ली में सीडीएस बिपिन रावत और उनकी पत्नी मधुलिका रावत को श्रद्धा सुमन अर्पित कर आगरा में सरन नगर स्थित विंग कमांडर के परिवार से मिले और उनसे शोक संवेदना व्यक्त की। मुख्यमंत्री ने कहा कि देश के पहले सीडीएस बिपिन रावत के साथ में सैन्य अधिकारियों के साथ हुई इस दुर्घटना से पूरा देश स्तब्ध है। हर भारतवासी की पूरी संवेदना उनके साथ है।

पत्रकारों को धमकाने के लिए ना हो ताकत का इस्तेमाल ममता सरकार को सुप्रीम कोर्ट ने दी यह नसीहत

नईदिल्ली। देश की सबसे बड़ी अदालत ने कहा है कि राज्य को अपनी ताकत का इस्तेमाल किसी राजनीतिक विचारधारा या पत्रकारों को धमकाने के लिए नहीं करना चाहिए। अदालत ने कहा कि राजनीतिक वर्ग को अपनी बात रखते वक्त आत्ममंथन करना चाहिए कि वो क्या कह रहे हैं। आज के ट्विटर युग में उन्हें और भी ज्यादा जिम्मेदार होना चाहिए। जस्टिस एस के कॉल और एम एम सुंदरेश की खंडपीठ ने एक न्यूज वेब पोर्टल के खिलाफ दर्ज एफआईआर को रद्द करते हुए यह टिप्पणी की। यह मामला पश्चिम बंगाल में छपे एक आर्टिकल से जुड़ा हुआ है। अदालत ने कहा कि यह देश अपनी विभिन्नता पर गर्व करता है, यहां अलग-अलग विचारधारा और सोच हो सकती है जिसमें राजनीतिक विचारधारा भी शामिल है। यह प्रजातंत्र का एक अहम तत्व है। 'राज्य की ताकतों का इस्तेमाल कभी भी राजनीतिक विचारों या पत्रकारों को डराने के लिए नहीं करना चाहिए जो सार्वजनिक डोमेन में है, उसका परिणाम पत्रकारों को भुगतना पड़ता है।' अदालत ने यह भी कहा कि इसका मतलब यह नहीं है कि एक पत्रकार किसी मामले में किस तरह रिपोर्ट करते हैं इसे लेकर वो अपनी जिम्मेदारियों से भागें।

अदालत में पश्चिम बंगाल सरकार की तरफ से वरिष्ठ वकील सिद्धार्थ दवे मौजूद थे। उन्होंने सुप्रीम कोर्ट की बेंच को बताया कि राज्य सरकार ने तय किया है कि वो डब्ल्यूएचई की संपादक नुपुर जे शर्मा, यूट्यूबर अजीत भारती और अन्य के खिलाफ दर्ज एफआईआर को वापस लेगी। सुनवाई के दौरान अदालत ने यह साफ किया कि इसका मतलब यह बिल्कुल नहीं है कि उन्हें कुछ ऐसा बोलने का अवसर मिल गया जिससे समाज में समस्या खड़ी हो जाए।

यूपी में जमीन पर कब्जा करने वालों की खैर नहीं : सीएम योगी

गोरखपुर। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने शुक्रवार को गोरखनाथ मंदिर में जनता दरबार लगाया। मंदिर के हिन्दू सेवाश्रम में सीएम योगी ने एक-एक कर 200 फरियादियों से मुलाकात कर उनकी समस्याओं के निस्तारण का आश्वासन दिया। सीएम ने वहां मौजूद अधिकारियों से कहा कि जनता दर्शन और जनसुनवाई पोर्टल पर आने वाली समस्याओं का तत्काल निस्तरण करें।

इस बार भी जनता दर्शन में महिलाएं अधिक पहुंची। अधिकांश शिकायतें पुलिस और जमीनी विवाद से जुड़ी हुई रहीं। सीएम योगी ने आश्वस्त किया कि किसी के साथ भी अन्याय नहीं होने दिया जाएगा। उन्होंने जमीन कब्जा करने वालों के खिलाफ सख्ती से पेश आने के निर्देश दिए। जनता दर्शन में मण्डलायुक्त रवि कुमार एनजी, डीएम विजय किरण आनंद, सीडीओ इंद्रजीत सिंह, एडीजी अखिल कुमार, एसएसपी विपिन ताडा, एसडीएम सदर कुलदीप मीना, नगर आयुक्त अविनास सिंह, जीडीए वीसी प्रेमरंजन सिंह, सीएम कैंप कार्यालय के प्रभारी मोतीलाल सिंह, अजय सिंह, द्वारिका तिवारी समेत अन्य मौजूद रहे। सुबह 7.30 बजे से शुरू जनता जनता दर्शन 8.15 बजे तक चला। इसके बाद लालकक्ष में आए यहां उनसे मिलने के लिए 50 की संख्या में आए लोगों से भी सीएम ने मुलाकात की। इस दौरान मुख्यमंत्री ने एक बच्चे को गोद में उठाकर दुलार भी किया। इसके बाद मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद के संस्थापक सप्ताह समारोह में शामिल होने के लिए निकल गए।

शुक्रवार की सुबह महायोगी गुरु गोरखनाथ का दर्शन पूजन कर मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने ब्रह्मलीन महंत दिग्विजयनाथ एवं ब्रह्मलीन महंत अवेद्यनाथ की समाधि पर माथा टेक आशीर्वाद लिया। मंदिर परिसर का भ्रमण कर और गोशाला में गो सेवा कर मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ इसके बाद जनता दर्शन के लिए हिन्दू सेवाश्रम पहुंचे। जनता दर्शन से निकल कर सीएम साधना भवन पहुंचे। जहां उन्होंने अपने श्वान कालू और गुल्लू को प्यार दुलार दिया।

नया मुकाम हासिल करने में जुटी योगी सरकार, 72 घंटों में किसानों के खाते में पहुंचे 2697 करोड़ रुपये

लखनऊ। धान खरीद में नया मुकाम हासिल करने में जुटी योगी सरकार ने चालू खरीफ सीजन में अब तक 309966 किसानों से 21.954 लाख मीट्रिक टन धान की खरीद की है। किसानों को उनकी उपज की खरीद के बदले समय पर भुगतान भी दिया जा रहा है। बीते 72 घटों में किसानों के खातों में 2697.15 करोड़ की राशि भेज दी गई है। सरकार की मंशा किसानों को अधिक से अधिक लाभ देकर उनको सशक्त और मजबूत बनाना है। इसके लिए हर संभव प्रयास किये जा रहे हैं। गुरुवार को किसानों से 1.29 लाख मेट्रिक टन धान खरीदा गया, जो एक रिकार्ड है। गेहूं खरीद में अविश्वसनीय परिवर्तन लाने के बाद मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की सरकार ने धान खरीद को पूरी तरह से पारदर्शी बनाया है। धान क्रय केन्द्रों की संख्या पहले से कई गुना बढ़ाई है। इतना ही

खबर संक्षेप

राष्ट्रीय लोक अदालत का आयोजन आज

प्रयागराज। उ0प्र0 राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, लखनऊ के निदेर्शानुसार जिला विधिक सेवा प्राधिकरण, प्रयागराज के तत्वाधान में आज प्रातः 10.00 बजे से जनपद न्यायालय, प्रयागराज व समस्त तहसीलो में राष्ट्रीय लोक अदालत का आयोजन किया जाएगा, जिसमें पारिवारिक वाद, मोटर दुर्घटना वाद, राजस्व संबंधी बैक के ऋण संबंधी वाद, विद्युत संबंधी वाद, फौजदारी वाद, आपसी सुलह समझौते के आधार पर होने वाले समस्त वादों का निस्तारण किया जाएगा। राष्ट्रीय लोक अदालत में वादों का निस्तारण कोविड 19 को ध्यान में रखते हुए हाईकोर्ट के दिशा निदेर्शों का पालन करते हुए किया जाएगा। समस्त वाद कारियो से अनुरोध है कि वे अपने मुकदमों के तस्दीक अपने अधिवक्ता के द्वारा उचित माध्यम से लोक अदालत के आयोजन से पूर्व संपन्न करा लें, जिससे उनके मुकदमो का निस्तारण किया जा सके। यह जानकारी श्रीमती प्रज्ञा सिंह- द्वितीय सचिव जिला विधिक सेवा प्राधिकरण, इलाहाबाद द्वारा प्रदान की गई।

नीलगाय से दो वृद्ध की मौत घर में मचा कोहराम

दोनों लोग लगते थे आपस में समधी

घटनास्थल पर मृतक का शव व लोगों की भीड़

अखंड भारत संदेश

थरवई। थरवई थाना क्षेत्र के वजीरपुर गांव के समीप नीलगाय की टक्कर से रिश्तेदारी में जा रहे दो लोगों की मौत हो गई। दोनों मृतक आपस में समधी थे। घटना की सूचना पाकर स्थानीय पुलिस मौके पर पहुंच गई। शव को कब्जे में लेकर पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया है। घटना की सूचना पर परिवार के लोग पहुंच गए।बहरिया थाना क्षेत्र के भरेहता गांव के जगदेव यादव (53) एवं सत्य नारायण यादव (55) निवासी अभईपुर आपस में समधी हैं। शुक्रवार को दोनों किसी रिश्तेदारी में जा रहे थे। थरवई थाना क्षेत्र के वजीरपुर गांव के सामने तेजरफ्तार बाइक में नीलगाय ने टक्कर मार दी। इससे दोनों सड़क पर गिर गए। यह देखकर आसपास के लोग जब तक उन्हें अस्पताल ले जाते उनकी मौत हो चुकी थी।

नीलगाय की झुंड में फंस गए थे बाइक सवार

प्रत्यक्षदर्शियों का कहना है कि दोनों बुजुर्ग तेज रफ्तार से सहसो की ओर आ रहे थे। तभी नीलगाय का झुंड सड़क पार कर रहा था। नीलगाय का एक झुंड सड़क पार कर चुका था। तभी इन्होंने अपनी मोपेड आगे बढ़ा दी, अचानक एक दूसरा झुंड रोड पर आ गया। जब तक मोपेड को संभालते नीलगाय टक्कर मारते हुए आगे निकल गई। नीलगाय की टक्कर इतनी जबर्दस्त थी कि वह अपने आप को संभाल नहीं सके। रोड पर गिर गये। जिससे सिर फट गया।

आसपास के लोग ने परिजनों को दी सूचना

घटना की सूचना स्थानीय लोगों ने मृतक के मोबाइल से परिजनो व थरवई पुलिस को सूचना दी। सूचना पाकर थानाध्यक्ष अपनी पुलिस टीम के साथ मौके पर पहुंचकर दोनों मृतकों के शव को कब्जे मे लेकर पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया। थरवई पुलिस ने बताया कि घटनास्थल पर मृतको के परिजन मौके पर पहुंचकर दुर्घटना की लिखित सूचना पुलिस को दी है। मृतक सत्यनरायण के चार लड़के है, जगदेव यादव के चार लड़के व तीन लड़किया है दोनों मृतक सगे समधी है।

जसरा में मुख्यमंत्री सामूहिक विवाह आज

जसरा। विकास खंड जसरा में 11 दिसंबर शनिवार को मुख्यमंत्री सामूहिक विवाह का आयोजन किया गया है। नोडल अधिकारी/एडीओ आईएसबी जीतेन्द्र कुमार गौड़ ने बताया कि इसमें 50 जोड़ों को वैवाहिक परिणय सूत्र में बांधा जाना है। मुख्यमंत्री वैवाहिक कार्यक्रम के मुख्य अतिथि प्रयागराज की सांसद डा०रीता बहुगुणा जोशी, विशिष्ट अतिथि बारा विधायक डा०अजय कुमार व ब्लॉक प्रमुख जसरा अजीत सिंह रहेंगे। खंड विकास अधिकारी जसरा हरिओम गुप्ता ने कहा कि सरकार की मंसा के अनुरूप समाज का जो भी गरीब मां बाप अपनी बेटियों की शादी का खर्च उठाने में मजबूर हैं, उन लोगों को मुख्यमंत्री सामूहिक विवाह योजना के तहत लाभान्वित किया जाएगा। इस योजना में लड़के की उम्र 21वर्ष व लड़की की उम्र 18 वर्ष होनी चाहिए। साथ ही दोनों परिवार उत्तर प्रदेश के मूल निवासी हों। विधवा व तलाक शुदा के लिए भी यह आयोजन प्रस्तावित किया गया है। उक्त कार्यक्रम श्री ईश्वरदीन छेदीलाल इंटर कालेज जसरा के ग्राउंड में किया जाएगा।

न्यूज झरोखा

भागवत कथा का सात दिनों तक श्रवण करने से जीव का उद्धार हो जाता है : यशोदानंदन महाराज

जंघई। श्रीमद्भागवत कथा के अंतिम दिन कथा का रसपान पाने के लिए भक्तों का सैलाब मधईपुर जंघई कथा स्थल पर उमड़ पड़ा। कथावाचक यशोदानंदन महाराज श्रृंगवेरपुर ने श्रीमद्भागवत कथा का समापन करते हुए कई कथाओं का भक्तों को श्रवण कराया जिसमें प्रभु श्रीकृष्ण के 16 हजार शादियों के प्रसंग के साथ, कृष्ण सुदामा प्रसंग और परीक्षित मोक्ष की कथायें सुनाई। इन कथाओं को सुनकर सभी भक्त भाव विभोर हो गए। कथा समापन के दौरान महाराज ने भक्तों को भागवत को अपने जीवन में उतारने की बात कही जिससे सभी लोग धर्म की ओर अग्रसर हो। कथा के अंतिम दिन सुदामा चरित्र के माध्यम से भक्तों के सामने दोस्ती की मिसाल पेश की और समाज में समानता का संदेश दिया। साथ ही भक्तो को बताया कि श्रीमद्भागवत कथा का सात दिनों तक श्रवण करने से जीव का उद्धार हो जाता है तो वहीं इसे कराने वाले भी पुण्य के भागी होते है। कथा आयोजक एवं यजमान रविन्द्र नाथ मिश्र ने अतिथियों का स्वागत किया।इस अवसर पर इंजीनियर घनश्याम पांडेय, नागेंद्र सिंह, प्रशांत शुक्ला विक्की, कृष्ण देव महाराज, बच्चन मिश्र प्रधान, संदीप गुप्ता, पिंटू मिश्रा प्रधान, जयप्रकाश पाठक, दिलीप, किशन पाठक, संदीप पांडेय, शैलेश पाठक आदि लोग मौजूद रहे।

महिलाओं का सम्मान भाजपा में ही संभव

अखंड भारत संदेश

300 महिलाओं ने ली भाजपा की सदस्यता

सहसों। भारतीय जनता पार्टी द्वारा चलाई जा रही विशेष सदस्यता अभियान के तहत बलीपुर मंडल के क्षेत्र पंचायत सदस्य जगवंती देवी के नेतृत्व में 300 महिलाओं ने हैबतपुर में भाजपा की सदस्यता ग्रहण किया। इस अवसर पर मौजूद बतौर मुख्य अतिथि पूर्व जिला उपाध्यक्ष गंगा पार एवं भूमि विकास बैंक फूलपुर अध्यक्ष वीरेंद्र बहादुर सिंह ने कहा भारतीय जनता पार्टी ही एक ऐसी सुदृढ़, सहज, सभी को सम्मान देने वाली पार्टी है। जिसमें महिलाओं का हित विकास एवं सम्मान सुरक्षित संभव है। इस अवसर पर प्रमुख रूप से जिला महिला मोर्चा महामंत्री रंजना सिंह परिहार, अमर सिंह, अतुल सिंह पटेल, अनिल पटेल, नाथूराम पटेल, अशोक कुमार गुप्ता, राय साहब पटेल, अंकित कुमार, अभय श्रीवास्तव, राजेश पटेल, फूलचंद गुप्ता सहित सैकड़ों कार्यकर्ता उपस्थित रहे।

भाजपा नेता वीरेंद्र बहादुर सिंह की मौजूदगी में सदस्यता लेंती महिलाएं

प्रयाग इंजीनियरिंग कॉलेज बेदो में फ्रेशर फंक्शन

मुख्य अतिथि एवं उत्कृष्ट छात्र एवं छात्राएं।

अखंड भारत संदेस

नव्या कार्यक्रम में छात्रों ने किया धमाल

करछना। शुक्रवार को प्रयाग इंजीनियरिंग कॉलेज बेदो करछना प्रयागराज संस्थान के प्रांगण में नवप्रवेशित छात्रों के स्वागत हेतु फ्रेशर फंक्शन नव्या 2021 का आयोजन किया गया। नव्या 2021 में दीप प्रज्जवलन के साथ बी टेक प्रथम वर्ष की छात्रा प्रीति एवं प्राची द्वारा प्रस्तुत सरस्वती वंदना के साथ कार्यक्रम की शुरूआत हुई। बी टेक तृतीय वर्ष की छात्रा शुभलता ने नवप्रवेशित छात्रों एवं अथितियो के लिए स्वागत गीत प्रस्तुत किया। श्रुति, श्रेया, ऋचा, महक, अदिति, अमृता, निष्ठा, सौम्या , दीपेश, आदर्श, सूरज ने शोलो डांस प्रस्तुत किया। राहुल, मंजीत, विभा एवं अन्य ने छात्र जीवन से सम्बंधित नाटक प्रस्तुत किया। अविरल, अतुल, अजित, अजय, हर्ष, व सौरभ ने देश की स्वतंत्रता के पूर्व एवं बाद की स्थिति के सम्बन्ध में बहुत सुन्दर प्रस्तुति की। मिस्टर फ्रेशर बी टेक में अविरल मिश्रा एवं डिप्लोमा में सूरज बिन्द को तथा मिस फ्रेशर बी टेक में महक कुमारी एवं डिप्लोमा में तनु सिंह को चुना गया। संसथान के चेयरमैन श्री ज्ञान सिंह पटेल ने छात्रों को पुरष्कृत किया। संसथान के सचिव श्री विकास सिंह ने सभी नवप्रवेशित छात्रों का स्वागत किया और उन्हें सभी जगह अपनी सम्पूर्ण ऊर्जा का उपयोग करने की सलाह दी। निदेशक डा० सुभाष चंद्र तिवारी ने छात्रों को अच्छी शिक्षा ग्रहण कर अच्छा इंसान बनने की सलाह दी। कार्यक्रम में अथिति के रूप में श्री प्रकाश सिंह, श्री शोभनाथ द्विवेदी, श्री रामललक सिंह मौजूद रहे। इसके अतिरिक्त कार्यक्रम में वीरेंदर सिंह , एच० ए ल ० पटेल, आशुतोष तिवारी, हिमांशु द्विवेदी , प्रेम चंद्र, भोला नाथ पांडेय, फरहत आरा, सुप्रिया श्रीवास्तव, आशमानन्द सिंह, अरविन्द पांडेय, महिपाल सिंह, अंकित सिंह सहित सभी अध्यापक एवं कर्मचारी सम्मिलित हुए।

निशुल्क स्वास्थ्य कैंप मे तीन सौ मरीजों का जांच कर दी मुफ्त में दवा

घूरपुर। श्रद्धापुष्प डायग्नोस्टिक एंड पॉलीक्लिनिक सेंटर नैनी द्वारा क्षेत्र के विमला देवी जूनियर हाई स्कूल में निःशुल्क स्वास्थ्य कैंप का आयोजन किया गया। जिसमे तीन सौ मरीजों का स्वास्थ्य जांच कर मुफ्त में दवा वितरण किया गया। जिसमें लेप्रोसी मिशन के चिकित्सक त्वचा रोग विशेषज्ञ डॉ.एस.पी.पटेल और जनरल फिजिशियन डॉ.संजय वर्मा एवं नेत्र रोग विशेषज्ञ डॉ.जय कल्याण यादव एवं अन्य स्वास्थ्य विशेषज्ञ टीम ने विभिन्न प्रकार के रोगियों का जांच कर दवा दी। और रोगों के लक्षणों के बारे में जानकारी देते हुए बताया कि बीमारियों के शुरूवाती लक्षण पहचान कर तत्काल चिकित्सक से इलाज करवाना चाहिए। अन्यथा लापरवाही बरतने से छोटी सी बीमारी आगे गंभीर रूप ले लेती है। सम्बन्धित स्कूल के छात्रों को भी रोगों के लक्षणों के और बचाव के प्रति जागरूक किया गया।श्रद्धापुष्प डायग्नोस्टिक एंड पॉलीक्लिनिक सेंटर के संचालक पुष्पराज सिंह ने कैंप के चिकित्सकों के प्रति आभार प्रकट किया।

पशु क्रेडिट कार्ड बनवाने के लिए राजकीय पशु चिकित्सालय में लगी भीड़

जसरा। भारत सरकार द्वारा चलाये जा रहे अभियान के तहत किसानों की आय दोगुना करने के लिए पशु किसान क्रेडिट कार्ड बिना किसी गारंटी के सरकार द्वारा दिया जा रहा है किसान इस लाभ को प्राप्त कर आमदनी बढ़ाएं।उक्त बातें मुख्य पशु चिकित्साधिकारी प्रयागराज डा.आर.पी.राय ने पशु चिकित्सालय जसरा में उपस्थित किसानों से केसीसी मेले में कही। डा. राय ने कहा कि क्षेत्र के किसी भी राष्ट्रीय कृत बैंक से किसान गाय,भैंस, बकरी, भेंड,गधा, खच्चर सहित भार वाहक सभी जानवरों पर चार प्रतिशत की दर से कर्ज प्राप्त कर सकते हैं। पशु चिकित्सालय जसरा के पशु चिकित्सक डा०सुनील कुमार मिश्र ने बताया कि किसान एक लाख साठ हजार रुपए तक का कर्ज बिना सिक्योरिटी के बैंकों से प्राप्त कर सकता है। इसके लिए सभी बैंकों को शासन द्वारा निर्देशित किया गया है। जसरा सीसी कैम्प में सत्तर किसानों ने अपने अपने फार्म भरकर पशु चिकित्साधिकारी जसरा को जमा कर दिया। डा०मिश्र ने कहा कि विकास खंड जसरा के बारा, जारी व चिल्लागौहानी पशु चिकित्सा केन्द्रों पर भी यह सुविधा उपलब्ध है। वहीं जिन किसानों का किसान क्रेडिट कार्ड बैंक से बना हुआ है उनका पशु किसान क्रेडिट कार्ड केसीसी के साथ जुड़ जाएगा। इस अवसर पर प०प्र०अधिकारी इन्द्रजीत सिंह,वेट फार्मासिस्ट राजबहादुर सिंह, किसान राजाबाबू पाठक,ब्रह्मदत्त पाठक,मुन्ना सिंह गहलौत,राम अभिलाष सिंह पटेल,बीरेन्द्र कुमार मौर्या, गुलाब सिंह,रामराज, रमेश चन्द्र बिंद,लालजी पटेल,राधेश्याम पटेल सहित सैकड़ो किसान मौजूद रहे।

अखिल भारतीय प्रधान संगठन की बैठक

13 दिसंबर को सी डी ओ से मिलेगा संगठन, सामूहिक विवाह में शामिल होंगे प्रधान गण

अखिल भारतीय प्रधान संघ की बैठक में शामिल प्रधानगण।

अखंड भारत संदेश

कोरांव। ब्लॉक मुख्यालय पर अखिल भारतीय ग्राम प्रधान संगठन कोरांव की एक बैठक संघ अध्यक्ष रामानुज यादव की सदारत में संपन्न हुई। प्रधानों ने अपने अपने गांवों की विभिन्न समस्याओं को ले कर चर्चा की। और 13 दिसंबर को संगम सभागार प्रयागराज में आयोजित बैठक में भाग लेने की बात कही। प्रधानों ने ग्राम पंचायतों के उचित दर विक्रेताओं की मनमानी पर अंकुश लगाने पर एस डी एम और आपूर्ति विभाग के अफसरों द्वारा कोई कार्यवाही न किए जाने,मनरेगा से समस्या ग्रस्त मार्गों रास्तों को पक्के कार्य किए जाने की अनुमति दिए जाने,साथ ही भूमि प्रबंधक समिति के अधिकार और कर्तव्य कृत्य प्रशासन पर तहसील पुलिस आपूर्ति,आदि विभागों के द्वारा सहयोग न किए जाने आदि मुद्दों पर सिकयती पत्र प्रस्तुत किए गए। जिसपर अध्यक्ष द्वारा मुख्य विकास अधिकारी को पत्रक सौंपा जा सके। साथ ही 11 दिसंबर को ब्लॉक कोरांव मुख्यालय पर मुख्य मंत्री सामूहिक विवाह योजनान्तर्गत होने वाले कार्यक्रम में ग्राम प्रधानों द्वारा कन्या दान का भी हिस्सा बनने की अपील की गई। बैठक में संगठन के कई पदाधिकारी एवं ग्राम प्रधान गण उपस्थित रहे।

शुआट्स का क्रिसमस जलसा 11 दिसंबर को

नैनी। सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय (शुआट्स) का भव्य क्रिसमस जलसा 11 दिसंबर को दिन में 10 बजे यीशु दरबार चर्च प्रांगण में मनाया जायेगा, यह जानकारी मीडिया प्रभारी डा. रमाकान्त दूबे ने दी। डा. दूबे ने बताया कि हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी क्रिसमस जलसे में विभिन्न रंगारंग भक्ति कार्यक्रम, गीत, भजन, आराधना एवं यीशु मसीह के जन्म पर आधारित नाटक का मंचन किया जायेगा। बिशप मोस्ट रेव्ह. प्रो0 राजेन्द्र बी. लाल, शुआट्स कुलपति इस अवसर पर सभा को सम्बोधित करेंगे एवं आशीषित वचन कहेंगे। कार्यक्रम में शुआट्स के निदेशकगण व यीशु दरबार के पदाधिकारी आदि उपस्थित रहेंगे। कोविंड गाइडलाइन को देखते हुए कार्यक्रम का आयोजन सोशल मीडिया यूट्यूब पर होगा जिसके माध्यम से छात्र-छात्राएं एवं यीशु दरबार के अनुयाईगण कार्यक्रम में शामिल होंगे।

अमृत महोत्सव कार्यक्रम के तहत लालापुर में निकली गई रथयात्रा

लालापुर। आजादी के 75वीं वर्षगांठ पर शुक्रवार को लालापुर में आजादी का अमृत महोत्सव कार्यक्रम किया गया। मुख्य अतिथि भाजपा जिला प्रतिनिधि शंकरलाल पाण्डेय ने दीप प्रज्जवलित एवं भारत माता की पूजा कर कार्यक्रम की शुरूआत की। कार्यक्रम के दौरान स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के बलिदान को याद करते हुए उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की गई। मुख्य अतिथि ने कार्यक्रम को संबोधित करते हुए कहा कि आजादी का अमृत महोत्सव में हमें उन स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को याद करना चाहिए जिन्होंने अपने प्राणों की आहुति देकर हम सबको स्वतंत्रता प्राप्त कराई। कार्यक्रम का संचालन करते हुए अविनाश तिवारी ने आजादी के 75वें वर्षगांठ पर देश के कई गुमनाम शहीदों को स्मरण कराया। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्लाह खान, सुखदेव व राजगुरु आदि शहीदों को नमन किया।इस मौके पर प्रा. वि. लालापुर के प्रधानाचार्य कल्याण चंद द्विवेदी, चंद्रनिधान पाण्डेय, विजय कुमार पाण्डेय, मनोज त्रिपाठी,मोहित तिवारी, दीपचंद्र शुक्ला,शैलेंद्र कुमार पाण्डेय, उपेंद्र पाण्डेय, शिवेंद्र पाण्डेय,ग्राम प्रधान चकसुचेर राजू पाण्डेय सहित कई कार्यकर्ता उपस्थित रहे।

बच्चों के सम्पूर्ण विकास में योग सहायक

सहसों। स्वाधीनता के 75 वें वर्ष पर अमृत महोत्सव की कड़ी में श्री कृष्ण इंटरमीडिएट कॉलेज देवनहरी में विद्यार्थियों एवं अध्यापकों गुरुजनों के बीच एक संगोष्ठी एवं योगाभ्यास का आयोजन किया गया। योग प्रशिक्षक आचार्य धर्मचन्द ने कहा कि स्वाधीनता की प्राप्ति में स्वामी दयानंद सरस्वती , स्वामी विवेकानंद, महर्षि रमण एवं श्री अरविंद जैसे संतों के त्याग तपस्या द्वारा जो विशाल ऊर्जा निकली उससे अंग्रेजों के छक्के छूट गए। वे मात्र भगवाधारी सन्यासी ही नहीं बल्कि राष्ट्र के युवकों में स्वतंत्रता की अग्नि प्रज्वलित करने में प्रमुख भूमिका निभाई। अरविंद घोष के जन्म दिवस 15 अगस्त को स्वतंत्रता मिलना मात्र संयोग ही नहीं कहा जा सकता बल्कि ऋषियों का तप माना जा सकता है। योगाचार्य ने कहा बच्चों के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिए योग को दिनचर्या मे अपनायें। विद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ मिथिलेश शुक्ला ने कहा कि योगाभ्यास बच्चों के संपूर्ण व्यक्तित्व विकास में सहयोगी है। बच्चों को चाहिए कि वह योगाचार्य द्वारा बताए गए योग क्रियाओं का नियमित अभ्यास करें। योगाचार्य ने अनुलोम विलोम, सूर्य नमस्कार,आदि का अभ्यास कराया। इस अवसर पर लक्ष्मी कांत मिश्र, तीरथ लाल , विनोद तिवारी , श्याम चन्द्र यादव, उमेश सिंह , दिवाकर, अभिषेक, निर्भय कुमार आदि अध्यापक एवं छात्र छात्राएं मौजूद रहे।

वीर सपूतों को जनाधार शक्ति पार्टी ने दी श्रद्धांजली

नैनी। बीते बुधवार को तमिलनाडु के कुन्नूर में हेलीकॉप्टर क्रैश हो जाने से देश के पहले सीडीएस जनरल बिपिन रावत समेत उनकी पत्नी सहित 11 वीर सपूतों का देहांत (शहीद) हो गए। इसी कड़ी में जनाधार शक्ति पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष आशीष दीक्षित के नेतृत्व में नैनी के मेवा लाल की बगिया स्थित पार्टी कार्यालय में एक शोक सभा का आयोजन किया गया। जिसमें मौजूद पदाधिकारियों व कार्यकताओं ने शहीद हुए मृत आत्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना की। साथ ही भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित की गई। इस दौरान पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष आशीष दीक्षित दुःख व्यक्त करते हुए कहा कि हमने देश के डिफेंस क्षेत्र की सबसे बड़ी हस्ती को खोया है। ऐसे वीर सपूत जिन्होंने देश के प्रति खुद को समर्पित कर अपना योगदान दिया। हम सब आपके दिए प्रत्येक योगदानों को कभी नहीं भूल सकते हैं। इस दौरान उत्तर भारत के अध्यक्ष अखिलेश शुक्ल, प्रदेश अध्यक्ष विनोद कुमार पटेल, देवाशीष श्रीवास्तव, अश्विनी तिवारी, प्रियांशू तिवारी, दुर्गेश शर्मा, राम बहादुर पटेल, राजकुमार पटेल, कर्मवीर आर्य, सोनू भारतीया सहित मीडिया प्रभारी पीयूष द्विवेदी व अन्य पदाधिकारी और कार्यकर्ता मौजूद रहे।

सेना प्रमुख को दी गई नम आंखों से श्रद्धांजलि

अखंड भारत संदेश

सहसों। क्षेत्र के चिरौरा गावं में उमाशंकर कुशवाहा के आवास पर पूर्व मंत्री एवं फाफामऊ के विधायक विक्रमाजीत मौर्य के नेतृत्व में शोक सभा का आयोजन किया गया। जिसमें सैन्य प्रमुख बिपिन रावत सहित अन्य सेना के अधिकारियों को नम आंखों से उपस्थित लोगों ने श्रद्धांजलि अर्पित की। मुख्य वक्ता के रूप में विक्रमाजीत मौर्य ने कहा यह हम लोगों के लिए ही नहीं देश तथा सेना के लिए भारी क्षति है। उसको पूरा नहीं किया जा सकता। सेना के दूरदृष्टि, आधुनिक बनाने वाले और कठोर फैसले लेने वाले शहीद बिपिन रावत आज हमारे बीच में नहीं हैं। उनके जीवन पर प्रकाश डालते हुए पूर्व मंत्री ने कहा कि उनके द्वारा किए गए कार्य, देश के लिए दिये गए योगदान को देश हमेशा याद रखेगा। इस अवसर फूलपुर ब्लॉक प्रमुख विपेंद सिंह पटेल, बहादुरपुर ब्लाक प्रमुख अरुणेंद्र यादव उर्फ डब्बू , भूमि विकास बैंक के अध्यक्ष वीरेंद्र बहादुर सिंह एवं पूर्व जिला अध्यक्ष गंगा पार अमरनाथ तिवारी ने भी शोक सभा में अपने विचार व्यक्त किए और पूर्व सेना प्रमुख एवं सीडीएस प्रमुख के द्वारा किए गए कार्यों का एवं उनके द्वारा लिए गए फैसलों का बखान किया। वक्ताओं ने कहा कि देश और समाज उनके द्वारा किए गए कार्यों को हमेशा याद रखेगा। कार्यक्रम की अध्यक्षता अमरनाथ कुशवाहा एवं कार्यक्रम का संचालन पवन कुमार शुक्ला ने किया। इस अवसर पर मुख्य रूप से नरेंद्र कुशवाहा, प्रमुख प्रतिनिधि शिव नारायण सिंह गप्पू डॉ राजेंद्र कुमार वर्मा, विजय कुमार कुशवाहा, नीरज मौर्य, राम सुधार विन्द, रमेश कुमार पटेल, सूर्यमणि पांडे, सुरेश कुशवाहा, राकेश मौर्य ,कमला कुशवाहा ,भागीरथी पाल ,धर्मेंद्र , सुशील सिंह, रामचरण कुशवाहा, विनोद कुशवाहा,अरविंद कुमार, अमृत लाल यादव, रामसूरत यादव, हिमालय सिंह, उदय राज आदि उपस्थित रहे। इसी प्रकार सहसों स्थित छत्रपति शिवाजी डिग्री कॉलेज में भाजपा के जिला उपाध्यक्ष अनिरुद्ध सिंह पटेल की अध्यक्षता में शोक सभा हुआ। जिसमें उपस्थित लोगों ने जनरल बिपिन रावत को अश्रुपूर्ण भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की एवं घटना में घायल कैप्टन की स्वास्थ्य में शीघ्र लाभ होने की ईश्वर से प्रार्थना की गई। इस अवसर पर संदीप दुबे, पुष्कर सिंह, पुष्पेंद्र सिंह, राघवेंद्र सिंह सिंगरौर सहित आदि लोग उपस्थित रहे।

शोक सभा में शामिल पूर्व मंत्री विक्रमाजीत मौर्य व अन्य

खबर संक्षेप

तिरंगा यात्रा आज जंघई शिवमंदिर से निकलेगी

जंघई। अमृत महोत्सव समिति मुंगरा बादशाहपुर के आवाहन पर विशाल तिरंगा यात्रा शनिवार को 101 दुपहिया वाहन से सुबह 9 बजे निकाली जाएगी। नागरिक इंटर कालेज शिव मंदिर से बाइक पर सवार होकर आजादी महोत्सव यात्रा का शुभारंभ होगा। चौरा माता मंदिर भोगीपुर में माँ भारती की आरती उतारी जाएगी।यात्रा जंघई कालोनी, अष्टभुजा गेट जंघई असवां मार्ग होते हुए भोगीपुर, कोइलहा, असवां होते हुए सेमरी डीह, बभनियांव मोड़ से मोलनापुर तक जाएगी यह जानकारी रोहित तिवारी ने दिया है।

पुलिस ने चेकिंग के दौरान की कार्यवाही

कौशाम्बी। जनपद में लाकडाउन के दृष्टिगत सरकार द्वारा निर्गत निदेर्शों के अनुपालन के क्रम में पुलिस अधीक्षक के निदेर्शानुसार जनपद स्तर पर विभिन्न थानों द्वारा अनावश्यक रूप से बाहर घूमने मास्क न लगाने एंव सोशल डिस्टेसिंग का पालन न करने वालों के विरुद्ध सघन चेकिंग की गई एंव चेकिंग के दौरान दो पहिया व चार पहिया वाहनों को चेक किया गया जिनमें 103 वाहनों का ई चालान किया गया।

अनशन कर रहे 24 छात्रों की हालत बिगड़ी

आक्रोशित साथियों ने मुख्य द्वार पर जड़ा ताला

हॉस्टल में रह रहे इलाहाबाद विश्व विद्यालय के छात्र यूजर चार्ज के विरोध में धरने पर बैठे

अखंड भारत संदेश

प्रयागराज। इलाहाबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय में कोविड काल के दौरान हॉस्टल में रह रहे छात्रों पर विवि प्रशासन की ओर से 5 से लेकर 15 हजार तक यूजर चार्ज लिया जा रहा है। इसके खिलाफ आज छात्रों का आक्रोश बढ़ गया। छात्रों ने एक तरफ जहां आमरण अनशन शुरू किया वहीं करीब एक दर्जन से अधिक छात्रों की तबियत बिगड़ने पर उन्हें बेली अस्पताल में भर्ती कराया गया।

आक्रोश को देखते हुए भारी फोर्स तैनात

विवि प्रशासन की ओर से यूजर चार्ज लिये जाने के आदेश के बाद आज छात्रों का रोष बढ़ गया। छात्र दोपहर से ही जुटने लगे। शाम होते-होते छात्रों का हुजूम बढ़ गया। छात्रों का कहना है कि जब तक अर्थदंड नहीं माफ किया जाता तब तक धरना-प्रदर्शन के साथ शांति पूर्व ढंग से आमरण अनशन जारी रहेगा। उधर विवि में भारी फोर्स तैनात कर दी गई है।

1097 छात्रों को देना होगा यूजर चार्ज

पीआरओ जया कपूर ने बताया कि कोविड के कारण हॉस्टल बंद कर दिए गए थे। छात्र अपने घरों को लौट गए थे। इसके बाद हॉस्टल के कमरों के ताले तोड़ दिए गए और वहां अवैध कब्जा हो गया। हॉस्टल के अधीक्षकों से रिपोर्ट मांगी गई, जिसके अनुसार जुलाई 2020 से जून 2021 तक 1097 छात्रों ने हॉस्टल के कमरों पर अवैध कब्जा किया। इस दौरान हॉस्टल आवंटित नहीं किए गए थे, लेकिन छात्रों ने हॉस्टल की सुविधाओं को पूरा इस्तेमाल किया। रूम रेंट, मेंटेनेंस चार्ज, बिजली, सरचार्ज के मद में अधिकतम 15 हजार रुपये प्रति छात्र यूजर चार्ज निर्धारित किया गया है। न्यूनतम यूजर चार्ज पांच हजार और अधिकतम 15 हजार रुपये निर्धारित किया गया है।

न्यूज झरोखा

नरेंद्र सिंह को सपा का प्रदेश सचिव बनाए जाने पर करछना प्रधान संघ नें दी बधाई

करछना। विकासखंड सभागार में आयोजित प्रधान संघ करछना की एक बैठक अध्यक्ष अध्यक्ष अवतार किशन सिंह एडवोकेट के नेतृत्व में प्रधान संघ की एक बैठक हुई जिसमें प्रयागराज के वरिष्ठ समाजवादी नेता स्वर्गी जनेश्वर मिश्र के सहयोगी रहे विधानसभा मेजा भडेवरा गांव निवासी जुझारू नेता नरेन्द्र सिंह को समाजवादी पार्टी की कार्यकारणी में सपा प्रदेश सचिव बनाये जाने पर करछना प्रधान संघ नें खुशी जाहिर करते हुए बधाई दी है ।संघ के अध्यक्ष नें कहा कि नरेन्द्र सिंह एक जुझारू समाजवादी पार्टी के नेताओं में गिनती की जाती रही हैं, वे हमेशा किसानों एवं छात्रों की लडाई में सदैव सहयोग और समर्थन करते हुए अपनी पहचान बनाने सबसे आगे रहे हैं, बैठक में उपस्थित मिथिलेश कुमार प्रधान डाडो, शिव गणेश पटेल प्रधान हथसरा, संदीप कुमार यादव प्रधान खजुरौल, पिंटू सिंह प्रधान गधियाव, समर जीत यादव प्रधान बसरिया सहित बडी संख्या में प्रधान व संघ के पदाधिकारी ने नरेन्द्र सिंह को बधाई दी है ।

राज्यसभा में मोतीलाल नेहरू मेडिकल कॉलेज प्रयागराज का मुद्दा उठाया : रेवती रमण सिंह

करछना। राज्यसभा सांसद कुंवर रेवती रमण सिंह ने राज्यसभा में कहा कि सरकार नये नये मेडिकल कॉलेज खोलने की घोषणा करतीं जा रही हैं पर दुर्भाग्य की बात है कि सबसे पुरे मेडिकल कॉलेज में एक मोतीलाल नेहरू मेडिकल कॉलेज सुविधाएं नगण्य हैं यहां पर हार्ट का आपरेशन तक नहीं होता हैं जिसकी वजह से लोग लखनऊ या दिल्ली का रूख करते हैं।सांसद ने कहा कि यूपीए सरकार में तत्कालीन केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री गुलाम नबी आजाद से 100करोड़ और 25करोड़ उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री अखिलेश यादव से मोतीलाल नेहरू मेडिकल कॉलेज को अपग्रेडेशन के लिए दिलाया गया था लेकिन अफसोस है कि बिल्डिंग बन गई पर जो हार्ट,कैंसर, लीवर जैसी गंभीर बीमारियों की सर्जरी अभी नहीं चालू हो सकीं।सांसद ने कहा कि प्रयागराज और उसके आसपास के जिलों में चिकित्सकीय सुविधा नगण्य हैं नर्सिंग होम व प्राईवेट अस्पताल बहुत मंहगे हैं जो गरीब आदमी को चुस ले रहे हैं इसलिए यहाँ के मेडिकल कॉलेज को अपग्रेड करने की अति आवश्यकता है जिससे आसपास के जिलों के मरीजों को दिल्ली लखनऊ ना भागना पड़े। सांसद ने कहा कि सिर्फ नये मेडिकल कॉलेज कागज पर ना हो कर धरातल पर हो उसमें सब सुविधा हो और उसी के साथ पुराने मेडिकल कॉलेज को भी अपग्रेड कर सुविधाएं मुहैया कराई जाय।

शोक सभा आयोजित कर वरिष्ठ समाजसेवी को दी श्रद्धांजलि

मेजा रोड। शुक्रवार को मेजारोड व्यापार मंडल कार्यालय पर वरिष्ठ समाजसेवी व समाजवादी पार्टी यूथ ब्रिगेड के राष्ट्रीय सचिव नितेश तिवारी के बाबा पंडित राममूर्ति तिवारी के निधन पर शोक सभा का आयोजन किया गया। इस दौरान मौजूद लोगों ने उनके कृतित्व व व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए समाजसेवा के क्षेत्र में अपूर्णीय क्षति बताया। इस अवसर पर दिवंगत आत्मा की शांति के लिए दो मिनट का मौन रखकर ईश्वर से प्रार्थना की गयी। शोक सभा में अध्यक्ष पप्पू उपाध्याय, सुशील पांडेय, भाजपा नेता विनय शुक्ला,भाजपा नेता अमरेश तिवारी, महामंत्री ओपी पांडे, कृष्ण प्रकाश उपाध्याय ,रमेश उपाध्याय सहित आदि लोग उपस्थित रहे।

मिड डे मील : जुलाई माह से नहीं आ रहा कनवर्जन कास्ट

अखंड भारत संदेश

ग्राम प्रधान,वरिष्ठ समाज सेवी ने लिखी मुख्यमंत्री पोर्टल पर आईजीआर एस चिट्ठी,पत्र पहुंचा प्रमुख सचिव बेसिक शिक्षा विभाग लखनऊ

कोरांव। पंचायत चुनाव समाप्त होने के बाद नव निर्वाचित ग्राम पंचायतों में स्थापित प्राथमिक एवं मिडिल स्कूलों में मिड डे मील की कनवर्जन कास्ट अभी तक नहीं आई,जिससे ग्राम पंचायतें परेशान हैं,साथ ही ग्राम प्रधानों द्वारा जुलाई माह से अपने स्तर से कनवर्जन कास्ट मैनेज कर रहे हैं। जिसकी शिकायत वरिष्ठ समाज सेवी और ग्राम प्रधान अल्हवा अहद अहमद सिद्दीकी उर्फ शहजादे पत्रकार ने जनसुनवाई सीएम पोर्टल पर पिछले नवंबर माह में की थी।

उक्त प्रकरण में संबंधित विभाग ने यह कह कर शिकायती पत्र का निस्तारण कर दिया कि संबंधित प्रकरण उक्त जिले के बेसिक शिक्षा अधिकारी स्तर से कार्यवाही की जा सकती है । जिस पर प्रधान शहजादे ने ऐसा असंतुष्टत फीडबैक दिया,और निस्तारण को सही नहीं बताया। तब जाकर उक्त शिकायत को ध्यान देते हुए विभाग ने निदेशक मिड डे मील स्तर से प्रमुख सचिव बेसिक शिक्षा विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ को आवश्यक कार्यवाही हेतु 27 नवंबर को रेफर किया गया है। तब से अभी तक विभाग ने कोई एक्शन नहीं लिया,जिससे ग्राम प्रधानों में असंतोष व्याप्त है। ग्राम प्रधान संगठन ने मुख्य सचिव यूपी लखनऊ से मांग की है कि यदि कन्वर्जन कास्ट एक सप्ताह के अंदर नहीं भेजी गई शिक्षा समिति के खातों में तो स्कूलों में खाना बनाना बंद कर दिया जायेगा।

क्या बोले ग्राम प्रधान

अहद अहमद सिद्दीकी उर्फ शहजादे ग्राम प्रधान संघ कोरांव प्रयागराज।

इतना ग्राम प्रधानों को वेतन भी नहीं मिलता कि प्रधान लोग अपने स्तर से खिलाएं बच्चों को भोजन,जबकि अध्यापकों,और उनके अधीनस्थ कई कर्मी पाते हैं अच्छा खासा वेतन या मानदेय। ग्राम प्रधान गांव की कई समस्याओं को अपने स्तर से निपटाते हैं। प्रधान धन पशु नहीं है।

क्रियायोग ध्यान में बैठकर श्रद्धांजलि देते साधक

क्रियायोग आश्रम में हेलीकॉप्टर क्रैश में मारे गए सभी सैन्य अधिकारियों को दी गई श्रद्धांजलि

प्रयागराज। झूंसी स्थित क्रियायोग आश्रम एवं अनुसंधान संस्थान में शुक्रवार को क्रियायोग ध्यान के बाद बैठकर सभी साधक अपने स्वरूप के अंतः गुफा में प्रवेश कर सूक्ष्म जगत से संपर्क कर सीडीएस बिपिन रावत तथा उनकी पत्नी व साथ में सफर कर रहे समस्त आर्मी के जवानों को हेलीकॉप्टर क्रैश में निधन हो जाने से उनकी आत्मा के सुख और शांति के लिए निराकार परम ब्रह्म से प्रार्थना किया गया , सभी सूरवीर भारत वर्ष में पुनः जन्म लेकर एक नई शक्ति व सर्वांगीण ज्ञान के साथ से सुसज्जित होकर भारत राष्ट्र को और सुरक्षित करते हुए पूरे विश्व के सभी राष्ट्रों को कैसे सुरक्षित करें का प्रशिक्षण देने के लिए साथ ही सभी देशों के सेनानियों को सत्य व अहिंसा नियमों में विश्व की सफल सेवा करने के लिए पुनः अदृश्य जगह से दृश्य जगत में जन्म लेने के लिए कामना की गई और शौर्य चक्र प्राप्त वरुण सिंह के शीघ्र स्वस्थ होने के लिए प्रभु से प्रार्थना की गई।

सपा पार्टी के युवजन सभा एवं छात्र सभा संगठन का किया गया विस्तार

करछना। सपा कार्यकताओं ने विधान सभा करछना क्षेत्र के कौवा गांव में आयोजित एक कार्यक्रम में मुख्य अतिथि सपा विधायक करछना उज्जवल रमण सिंह ने नेतृत्वकारी योजना के अंतर्गत पार्टी को मजबूत बनाने के लिए समाजवादी पार्टी के युवजन सभा एवं छात्र सभा के संगठन का विस्तार किया गया ।जिसमें विशिष्ट अतिथि पूर्व ब्लॉक प्रमुख विजय राज सिंह राजू , युवजन सभा जिलाध्यक्ष हर्षित पाण्डेय , जिला महासचिव अरुण यादव रहे ।इस कार्यक्रम का संचालन कर रहे विधानसभा अध्यक्ष युवजन सभा राजू पटेल, विधानसभा अध्यक्ष छात्रसभा विकास सोनी, करछना ब्लॉक अध्यक्ष युवजन सभा कांति पासी व कौंधियारा ब्लॉक अध्यक्ष छात्रसभा कार्तिक पाण्डे जी रहे ।इस मौके पर सुष्मा सरोज, प्रदेश सचिव यूथ ब्रिगेड हिमांशु मिश्रा, कुलदीप सिंह, सौरभ सिंह आजाद, लवकुश सिंह, मोहित पांडे, मोहित यादव, आदर्श पांडे, डॉ. धर्मेंद्र यादव, विजय प्रकाश यादव, आशीष केशरवानी जी मौजूद रहे।

तुषारदत्त बने मेजा कोतवाली के नए थानाध्यक्ष

अखेंड भारत संदेश

सिरसा। शुक्रवार को मेजा कोतवाली मे नवागत थानाध्यक्ष ने कार्यभार संभाला। पुलिस के प्रति लोगों का भरोसा बढ़ाने के लिए लिए पीड़ित को त्वरित न्याय दिलाया जाएगा व अपराधियों पर शीघ्र कार्रवाई की जाएगी। महिला की सुरक्षा उनके स्वाभिमान को लेकर कोतवाली पुलिस उनके साथ हमेशा खड़ी रहेगी। थाना क्षेत्र मे कानून का राज स्थापित करना उनकी प्राथमिकता है। उक्त बातें नवागत थानाध्यक्ष मेजा तुषारदत्त त्यागी ने कोतवाली का प्रभार संभालने के बाद पत्रकारों से रूबरू होते हुए कही। थानाध्यक्ष ने आगे कहा कि पीड़ित को न्याय मिलेगा तो जनता के दिल में पुलिस के प्रति भरोसा उत्पन्न होगा। बता दें कि बीते दिनों तत्कालीन कोतवाल मेजा अरुण कुमार चतुवेर्दी का गैर जनपद स्थानांतरण हो गया। जिनके स्थान पर मेजा थाने के दरोगा पंकज कुमार त्रिपाठी को चार्ज सौंपा गया है। वहीं बृहस्पतिवार को वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक प्रयागराज सर्वश्रेष्ठ त्रिपाठी ने प्रभारी निरीक्षक तुषारदत्त त्यागी को पुलिस लाइन से स्थानांतरित कर अतिरिक्त प्रभारी निरीक्षक मेजा की कमान सौंपी। वहीं शुक्रवार को नवागत कोतवाल तुषारदत्त त्यागी मेजा कोतवाली पहुंचकर कार्यभार ग्रहण किया। क्षेत्रवासियों का कहना है कि नए कोतवाल साहब लोगो को कितना न्याय दिलाने का कार्य करेंगे ये समय के गर्भ में हैं।

व्यापारी संगठन एवं जिला पंचायत सदस्य द्वारा जनरल बिपिन रावत को दी गई श्रद्धांजलि

अखंड भारत संदेश

लेडियारी। दो दिन पूर्व हेलीकॉप्टर क्रैश दुर्घटना में शहीद हुए सीडीएस जनरल बिपिन रावत एवं उनके साथ अन्य शहीदों को खीरी बाजार के व्यापारियों का समूह एकत्रित होकर जिला पंचायत सदस्य कुसुम पत्नी ओंकार नाथ केसरी के आवास पर शोक सभा आयोजन किया गया सर्वप्रथम जिला पंचायत सदस्य ने व्यापारी सदस्यों ने सर्वप्रथम दो मीनट का मौन रखकर शहीदों की आत्मा शांति की भगवान से कामना की गई तत्पश्चात दीप प्रज्वलित करके समर्पित किया गया' आगे जिला पंचायत सदस्य प्रतिनिधि ओंकार केसरी ने कहा की आज देश के लिए बहुत ही विषम घड़ी खड़ी हो गई है क्योंकि आज हमारे भारतवर्ष का बहुत ही होनहार एवं चाणक्य की तरह सोच रखने वाले देशभक्त देश के लिए शहीद हो गये है । जिनकी कमी को पूर्ण करना असंभव सी बात है' शहीद जनरल बिपिन रावत का संपूर्ण परिवार ही देश भक्ति में लीन रहा' आपातकालीन समय में अपने दृढ़ निश्चय एवं सूझ बूझ वाले निर्णय से विरोधी खेमे को चित करने की माद्दा रखते थे अपने संपूर्ण जीवन काल में अपने तेज निर्णय के कारण कश्मीर के पत्थरबाजों को भारतीय सेना का भक्त बना दिया था तत्पश्चात सभी व्यापारियों द्वारा उनके चित्र पर पुष्पांजलि श्रद्धा सुमन अर्पित की गई' उक्त मौके पर विजय पाल, नन्हे केसरी, ओंकार नाथ केसरी, राजेश केसरी, वीरेंद्र केसरी, बद्री प्रसाद केसरी, लालजी, मनोज कुमार के अलावा दर्जनों की संख्या में व्यापारी मौजूद रहे।

कैंडल मार्च निकाल कर दी गई शहीदों को श्रद्धांजलि

नैनी। सीडीएस बिपिन रावत एवं उनके साथ 12 अन्य सैनिकों के शहीद होने पर कैंडल मार्च निकालकर पीडीए पुलिस चौकी के पास शोक श्रद्धांजलि अर्पित की गई व दो मिनट का मौन रख शहीदों की आत्मा की शांति हेतु ईश्वर से प्रार्थना की गई। श्रद्धांजलि देने वालों में बड़ी संख्या में सामाजिक, राजनीतिक एवं संभ्रांत नागरिक उपस्थित मौजूद रहे।

संगम की रेती पर तंबुओं की नगरी को बसाने के लिए सरकार ने झोंकी ताकत

सुनील गिरि (गिरी बाबा)

संबंधित विभागों की ओर से कार्यों को अंजाम देने के लिए जुटे अधिकारी व कर्मचारी उत्तर प्रदेश में आगामी महीनों में विधानसभा चुनाव को देखते हुए माघ मेला में लगेगा नेताओं का भारी डेरा, बीते वर्षों की तरह इस बार भी पांच सेक्टरों में बांटा जाएगा माघ मेला क्षेत्र

प्रयागराज। 22 करोड़ की आबादी उत्तर प्रदेश में आगामी महीनों में विधानसभा चुनाव का होना तय हैं। लगभग एक माह पूर्व प्रयागराज जिले के अंतर्गत संगम नगरी गंगा यमुना व सरस्वती के तट पर प्रत्येक वर्षों की तरह बालू की रेत पर तंबुओं की नगरी को बसाने के लिए उत्तर प्रदेश सरकार संबंधित विभागों को बजट आवंटित कर कार्यों को अंजाम देने के लिए दिशा निर्देश दे चुके हैं। उसी दिशा निर्देश को पालन करने के लिए प्रत्येक वर्षों की तरह इस बार भी प्रत्येक वर्षों के तहत माघ मेला क्षेत्र को तंबुओं की नगरी को बसाने के लिए तैयारियां जोरों शोरों से जारी है। हालांकि इस बार माघ मेला क्षेत्र में नेताओं का डेरा जारी रहेगा। वजह यह है कि आगामी महीनों में उत्तर प्रदेश में विधानसभा चुनाव होना तय हैं। लाखों की संख्या में देश और विदेश से लोग संगम की रेत पर लगने वाले तंबुओं की नगरी में आते हैं। साथ ही गंगा, यमुना व सरस्वती का स्नान कर प्रयागराज की पावन पवित्र धरती पर पूजा-पाठ अर्चना कर अपने गंतव्य को लौटते हैं। मान्यता है कि प्रयागराज जिले के गंगा, यमुना और सरस्वती यानी कि संगम का स्नान कर सच्चे मन से पूजा पाठ करने से उनकी प्रत्येक मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं। इस बार आगामी महीनों में 22 करोड़ की आबादी वाले उत्तर प्रदेश में विधानसभा का चुनाव होने की वजह से आशंका जताई जा रही है कि राज्य से लेकर केंद्र तक के नेताओं की भीड़ माघ मेला क्षेत्र में लगने वाली है। संगम की रेती पर लगने वाले विश्व के सबसे बड़े आध्यामिक माघ मेला 2022 की तैयारियां जोरों पर हैं। संबंधित समस्त विभाग आगामी माघ मेले की तैयारियों में युद्ध स्तर से जुटे हुए हैं। मेला प्राधिकरण की कोशिश है की दिसंबर के आखिर व जनवरी के पहले सप्ताह तक हर हाल में मेले की सभी तैयारियों को अंतिम रूप दे दें, ताकि उत्तर प्रदेश व देश के अलावा विश्व के कई देशों से आने वाले कल्पवासियों, श्रद्धालुओ को किसी तरह की कोई दिक्कत न उठानी पड़े। मेला प्राधिकरण के मुताबिक पिछले साल की तरह इस बार भी माघ मेले को पांच सेक्टरों में बसाया जाएगा। साथ ही गंगा-यमुना नदी पर पांच पांटून पुल बनाए जाएंगे। पीपे के पुल और जल निगम की ओर से मेला क्षेत्र में तैयारियां तेजी से की जा रहीं हैं। गंगा की बीच धारा में पीपे के पुल का निर्माण भी शुरू हो चुका है। साथ ही अन्य विभागों के अपने-अपने कार्यालयों के निर्माण भी शुरू हो चुकें हैं। संगम नोज और त्रिवेणी मार्ग पर जमीनों का समतलीकरण भी तेजी से किया जा रहा है। हालांकि अबकी बार बाढ़ के आने की वजह से गंगा यमुना के जलस्तर में बढ़ोतरी देखी जा रही है। जिसकी वजह से परेशानियां भी आ रही है, लेकिन उस परेशानियों को दूर करने के लिए विभागीय लोग हर संभव प्रयास करने में जुटे हुए हैं। माघ मेला 2022 के लिए बनाए गए मेला अधिकारी शेषमणि पाण्डेय ने बताया की मेले को लेकर सभी विभागों के बीच बैठक करके तैयारियों को युद्ध स्तर पर करने के निर्देश दिए गए हैं। सभी विभागों को समय से कार्यों को पूरा करने के निर्देश दिए गए हैं। मेला अधिकारी ने दावा किया है की सभी तैयारियों को समय से पूरा करा लिया जाएगा। कोविड के नए वैरिएंट को लेकर इस बार माघ मेले में खास सतर्कता बरतने के निर्देश दिए गए हैं। मेला अधिकारी ने सभी कल्पवासियों और साधु संतो से अपील की है की मेले में आने वाले सभी लोग इस बार कोविड वैक्सीन की दोनों डोज लगवाकर आएं। साथ ही कोविड गाइडलाइंस को भी फॉलो करें। जिससे मेले को सुचारू रूप से संपन्न कराया जा सके। मेला अधिकारी ने कहा की सभी स्वास्थ्य विभाग की तरफ से इस बार मेला क्षेत्र में वैक्सीनेशन कैंप भी लगाए जाएंगे। उधर संगम तट पर मौजूद तीर्थ पुरोहित अजय शास्त्री का कहना है कि देश दुनिया में फैले कोरोना वायरस जल्द से जल्द पूरी दुनिया से दूर हो इसके लिए मां गंगा से विशेष तौर पर प्रार्थना किया जाएगा।

कार्यालय ग्राम पंचायत बसही वि. ख. करछना प्रयागराज

टेण्डर/कोटेशन

मनरेगा/चतुर्थ राज्य वित्त/14वां/15वां वित्त योजनाअन्तर्गत ग्राम पंचायत बसही विकास खण्ड करछना में अद्योलिखित कार्यो के आगणन /प्राकलन के अनुसार यथा आवश्यक मात्रा में सामग्री कार्य स्थल पर आपूर्ति भाड़ा सहित पहुंचाकर आपूर्ति हेतु आपूर्तिकर्ता से सील बन्द लिफाफे में टेन्डर/कोटेशन अद्योहस्ताक्षरी के कार्यालय में दिनांक 01–12–2021 से दिनांक 05–12–2021 को अपराह्न 3 बजे तक आमंत्रित किया जाता है। उक्त तिथि के बाद प्राप्त किसी भी टेन्डर/कोटेशन पर विचार नहीं किया जायेगा आपूर्तिकर्ता अपना कोटेशन/टेन्डर उक्त तिथि तक जमा कर सकते हैं नियम व शर्तें किसी भी समय कार्यालय कार्यदिवस में देखी जा सकती है तथा टेन्डर फार्म की बिक्री उक्त अवधि में कार्यालय समय 10 से 12 बजे तक प्रत्येक कार्यदिवस पर की जायेगी। किसी एक व समस्त टेन्डर/कोटेशन को निरस्त करने का अधिकार ग्राम पंचायत बसही में निहित होगा। टेन्डर/कोटेशन दिनांक 10–12–2021 को अपराह्न 4 बजे पूर्व निर्धारित कमेटी के समक्ष खोला जायेगा। टेन्डर/कोटेशन फार्म कार्यालय में ग्राम पंचायत विकास अधिकारी के पास दिनांक 10–12–2021 कार्यालय अवधि में समय 3.30 अपराह्न तक जमा किया जा सकता है। निम्नलिखित कार्य पर पर जिस–जिस सामग्री की आवश्यकता है उसका विवरण कार्यलय/नोटिस बोर्ड पर चस्पा है उत्तर प्रदेश माल एवं सेवाकर अधिनियम के अन्तर्गत अनुमन्य जी.एस.टी. का भुगतान किया जायेगा। जिसके जमा करने का दायित्व आपूर्तिकर्ता का होगा साथ ही जी.एस.टी जमा चालान की आपूर्तिकर्ता द्वारा स्वप्रमाणित प्रति भुगतान के एक माह के अन्दर अपरिहार्य रूप से जमा करना होगा उसके उपरान्त ही अगला भुगतान किया जायेगा उस भुगतान पर ही उक्त नियम व शर्तें लागू रहेगी। इसके विपरीत स्थिति पाने पर भविष्य के उक्त फर्म को काली सूची में डालने हेतु यथोचित विधिक कार्यवाही कर दी जायेगी।

क्र0	कार्य का नाम	अनुमानित लागत (लाख में) सामग्री अंश	सामग्री अंश आपूर्ति की अवधि
1.	प्राथमिक विद्यालय बसही प्रथम में टाईल्स फ्लोरिंग कार्य	4.93 लाख	10 दिन
2.	आदर्श पूर्व माध्यमिक विद्यलाय बसही में टाईल्स फ्लोरिंग कार्य	4.97 लाख	10 दिन
3.	प्राथमिक विद्यालय पतुलकी में टाईल्स एव फ्लोरिंग कार्य	3.11 लाख	10 दिन
4.	शम्भू भारतीया के घर से राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय के घर तक पक्की नाली निर्माण कार्य	2.00 लाख	10 दिन
5.	जगदीश पाण्डेय के घर से मुनीनारायण के खेत तक पक्की नाली निर्माण कार्य	2.5 लाख	10 दिन

अभिषेक सिंह
ग्राम प्रधान
ग्राम पंचायत बसही
वि0 ख0 करछना प्रयागराज

पत्रांक: मेमो/ग्राम पं. वि. अ./टेण्डर/ कोटेशन/ 2020-21/ दिनांक

महेश कुमार
ग्राम विकास अधिकारी
ग्राम पंचायत बसही
वि0 ख0 करछना प्रयागराज

समाज की सही भागादारी और सम्मान भाजपा में ही सुरक्षित

अखंड भारत संदेश

रानीगंज विधान सभा में आयोजित सम्पर्क कार्यक्रम में बोले राम नरेश

उपाध्यक्ष राम नरेश का स्वागत करते विधायक धीरज ओझा

प्रतापगढ़। रानीगंज विधानसभा क्षेत्र के बरहदा, सिंगाही व देल्हूपुर में आयोजित सामाजिक संपर्क कार्यक्रम का आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि के रुप में राम नरेश पासवान उपाध्यक्ष उत्तर प्रदेश अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जन जाति आयोग ने लोगो को संबोधित करते हुए कहा कि प्रधानमंत्री मोदी व मुख्यमंत्री योगी के नेतृत्व में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों का सामाजिक एवं आर्थिक विकास सही रूप से हो रहा है।

उन्होंने कहा कि हमारे समाज की सही भागीदारी और सम्मान दोनों ही भाजपा में ही सुरक्षित है इसलिए आवश्यक है कि देश एवं प्रदेश के सतत विकास तथा समाज हित मे हमे भाजपा के साथ हर कदम पर खड़ा रहना चाहिए। क्षेत्रीय विधायक धीरज ओझा ने कहा कि पंडित दीनदयाल उपाध्याय अंत्योदय के सपने को आत्मसात करते हुए भारतीय जनता पार्टी की रीति-नीति सबका साथ-सबका विकास-सबका सम्मान करते हुए रानीगंज क्षेत्र में लगभग 1100 करोड़ की विकास परियोजनाओं का धरातलीय क्रियान्वयन हो रहा है। जन संपर्क कार्यक्रम के दौरान दिनेश गौतम, रंजीत गौतम, प्रेम शंकर गौतम, भारत लाल गौतम, सुनीता गौतम, भगेलूराम, कलावती व मो अयूब इत्यादि लोगो द्वारा भारतीय जनता पार्टी की सदस्यता ग्रहण करने पर मंत्री जी व विधायक उनका अभिनंदन किया। इस दौरान विधानसभा प्रभारी सतीश द्विवेदी जी, अनुसूचित मोर्चा के जिला उपाध्यक्ष एवं पूर्व प्रमुख गौरा राकेश सरोज, प्रमुख शिवगढ़ सत्यम ओझा, प्रतिनिधि नीरज ओझा व शिवम ओझा, मंडल अध्यक्ष रानीगंज प्रशांत श्रीवास्तव, मण्डल अध्यक्ष देल्हूपुर विजय कौशल व मण्डल अध्यक्ष गौरा बृजेश पटेल, महामंत्री विवेक शर्मा, भाजयुमो के विपुल शुक्ल, सुमित पाण्डेय, नीरज श्रीवास्तव, मीडिया प्रभारी ललित तिवारी इत्यादि उपस्थित रहे।

गरीब व जरुरतमंदों को सयुस ने बांटा कम्बल

अखंड भारत संदेश

मानव सेवा ही सबसे बड़ी सेवा : अर्सलान

गरीबों को कम्बल देते अर्सलान सिद्दीकी

प्रतापगढ़। समाजवादी पार्टी के पूर्व प्रत्याशी विश्वनाथगंज संजय पांडे के निर्देश पर समाजवादी युवजन सभा के कार्यकताओं ने अर्सलान सिद्दीकी जिला उपाध्यक्ष समाजवादी पार्टी युवजन सभा प्रतापगढ़ के नेतृत्व एवं अध्यक्षता में रेलवे स्टेशन प्रतापगढ़ पर गरीबों एवं जरूरतमंदों को 51 कंबल का वितरण किया गया।

कार्यक्रम को संबोधित करते हुए अर्सलान सिद्दीकी गुड्डू ने कहा कि मानव सेवा ही सबसे बड़ी सेवा है। मानव सेवा में कभी जाति धर्म को बीच में नहीं लाना चाहिए। आज समाजवादी पार्टी ही हमेशा गरीबों, मजलूमों, किसानों एवं मजदूरों के विषय में सोचती है। और यही सीख हमको हमारे नेता माननीय मुलायम सिंह यादव एवं माननीय अखिलेश यादव जी से मिलती है और हम सब समाजवादी संकल्प करते हैं कि मानव सेवा में सदैव तत्पर रहेंगे। समाजवादी युवा नेता अमन सागर ने कहा की जब भी पार्टी का निर्देश होगा हम मानव सेवा करते रहेंगे। कार्यक्रम में मुख्य रूप से मोहम्मद लाइक जिला सचिव युवजन सभा, युवा नेता समीर, सुजीत मौर्या, अभय यादव आदि उपस्थित रहे।

मतदान के प्रति जागरुक करने के लिये निकली रैली में शामिल अतिथिगण

एमडीपीजी कालेज के छात्र-छात्राओं ने शहर में घूम-घूमकर किया जागरुक

मतदान के प्रति जागरुक होने के लिये छात्रों ने निकाली रैली

अखंड भारत संदेश

प्रतापगढ़। मतदाता जागरूकता कार्यक्रम के अंतर्गत शुक्रवार को मुनीश्वरदत्त स्नातकोत्तर महाविद्यालय प्रतापगढ़ में मतदान के प्रति लोंगो को जागरूक करने के लिए विशाल रैली निकाली गई, जिसमें महाविद्यालय के छात्र-छात्राओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। इस रैली का आयोजन महाविद्यालय से भगवा चुंगी चैराहे तक किया गया। इस अवसर पर महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ मनोज मिश्र ने छात्रों को मतदाता जागरूकता के संदर्भ में अपना उद्बोधन दिया, उन्होंने कहा मतदान लोकतंत्र का मूल आधार है ,लोकतंत्र की सफलता के लिए अधिकतम मतदान होना चाहिए और उन्होंने छात्रों को यह शपथ भी दिलाया कि वह स्वयं भी मतदान करेंगे और अपने आसपास के लोगों का भी मतदान अवश्य कराएंगे। इस कार्यक्रम में महाविद्यालय कि जूलॉजी विभाग की एसोसिएट प्रोफेसर एवं एन.एस.एस.की कार्यक्रमाधिकारी डॉ.अमिता मिश्रा, बी. एड. विभाग की एसोसिएट प्रोफेसर डॉ. उषा दुबे, गणित विभाग से डॉ. डी.के. पांडेय एवं बी. एड. विभाग से डॉ. शैलेश कुमार पांडेय आदि उपस्थित रहे।

कांग्रेस के जिला प्रवक्ता व कोआर्डिनेटर के लिये हुई परीक्षा

अखंड भारत संदेश

प्रवक्ता शुचि विश्वास की देखरेख में साक्षात्कार सम्पन्न

लिखित परीक्षा के दौरान कांग्रेस के पदाधिकारीगण

प्रतापगढ़। उ0प्र0 कांग्रेस कमेटी के निर्देश पर आज प्रतापगढ़ में जिला प्रवक्ता व मीडिया को-आर्डिनेटर पदों के लिए लिखित परीक्षा, ग्रुप डिस्कसन व साक्षात्कार सम्पन्न हुआ। पूरी परीक्षा उ0प्र0 कांग्रेस कमेटी प्रवक्ता शुचि विश्वास की देखरेख में सम्पन्न हुई।

साक्षात्कार में प्रतियोगियों से शुचि विश्वास ने प्रियंका गांधी की प्रतिज्ञाओं से संबंधित सवाल किए। उन्होंने महिलाओं की भागीदारी पर बल देते हुए कहा कि कांग्रेस संगठनों में भी महिलाओं की पर्याप्त भागीदारी पर बल देने की आवश्यकता है। इस अवसर पर जिलाध्यक्ष डॉ0लालजी त्रिपाठी ने कहा कि परीक्षा के माध्यम से योग्य साथियों का चुनाव हो सकेगा। इस अवसर पर डा0वी0के0सिंह, नरसिंह प्रकाश मिश्र, इरफान अली, वेदान्त तिवारी, कपिल द्विवेदी, महेंद्र शुक्ल, राम रतन तिवारी, सुरेश मिश्र, मो0 इश्तियाक, संतोष तिवारी, हुश्नारा, आशुतोष तिवारी, मकरंद शुक्ल, मो0 दिलशाद, श्याम शंकर तिवारी, जय करन वर्मा, आकाश मिश्र, अजीत सिंह, मो0 बेलाल, अब्दुल रहमान, सहित अनेक कांग्रेस जन मौजूद रहे।

पीबीपीजी कालेज में फुटबाल टीम का चयन 13 को

अखंड भारत संदेश

प्रतापगढ़। प्रो0 राजेन्द्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज के क्रीड़ा सचिव डा0 पवन कुमार पचैरी ने बताया कि विश्वविद्यालय की महिला एवं पुरुष फुटबाल टीम का चयन प्रतापगढ़ के प्रताप बहादुर स्नातकोत्तर महाविद्यालय प्रतापगढ़ सिटी में सम्पन्न होगा। चयन हेतु टीम 13 दिसम्बर को महाविद्यालय परिसर में पूर्वान्ह दस बजे तक पहुंचें। चयन प्रक्रिया से ही टीम का चयन होगा।

नाले में मिला नवजात शिशु का शव

अखंड भारत संदेश

प्रतापगढ़। नगर कोतवाली क्षेत्र के एस बी आई बैंक के निकट पुराना महिला अस्पताल के बगल नाले में एक नवजात शिशु का शव मिला है जिसको लेकर तहर-तरह की चचाएं हैं। नाले में शव मिलने से मोहल्ले में हड़कंप मच गया। लोग चर्चा कर रहे थे कि कलयुगी मां इस तरीके से बच्चों की बलि दे रही हैं जो कि निंदाजनक है। पुलिस ने शव को बरामद कर लिया है और मामले की छानबीन कर रही है।

संदिग्ध हालत में पति-पत्नी की मौत

अखंड भारत संदेश

प्रतापगढ़। कोहड़ौर थाना इलाके के सराय शंकर गांव में संदिग्ध परिस्थितियों में पति पत्नी की मौत हो गई। मृतक नीलेश व उसकी पत्नी रोशनी है। बता दें कि चार माह पूर्व दोनों का प्रेम विवाह हुआ था। दम्पत्ति की हालत गंभीर होने पर दोनों को मेडिकल कालेज ले जाया गया जहां से हालत गंभीर होने पर उन्हें प्रयागराज के लिये रेफर कर दिया गया, जहां इलाज के दौरान दोनों की मौत हो गई। इलाके में दम्पत्ति के जहरीला पदार्थ खाने के बाद मौत होने की चर्चा है।

शादी का झांसा देकर दुष्कर्म का आरोप, दी तहरीर

अखंड भारत संदेश

लालगंज, प्रतापगढ़। सांगीपुर थाना क्षेत्र के एक गांव की पीड़िता ने पुलिस को तहरीर देकर आरोप लगाया है कि गांव के ही एक आरोपी युवक ने उसकी पुत्री को शादी का झांसा देकर तीन वर्षों से दुष्कर्म की वारदात अंजाम देता रहा है। आरोप है कि पीडिता जब गर्भवती हो गयी और आरोपी युवक पर शादी का दबाव बनाने लगी तो आरोपी ने धोखे से दवा खिलाकर गर्भपात करा दिया। इसके बाद आरोपी ने शादी से इंकार कर दिया। पीड़िता ने परिजनों को आपबीती सुनाई। पीडिता के पिता ने जानकारी होने पर आरोपी के घर जाकर उलाहना दिया तो आरोपी व परिजन उसे जानलेवा धमकी देते भगा दिया।

जमीनी रंजिश में चली लाठियां, नौ लोग जख्मी

अखंड भारत संदेश

पट्टी, प्रतापगढ़। आबादी की जमीन को लेकर दो पक्षों में जमकर कहासुनी हुई और हाथापाई के साथ लाठी-डंडे भी चलें जिसमें कुल नौ लोग को चोटे आई हैं दोनों पक्षों ने थाने में एक दूसरे के खिलाफ तहरीर दी है। कंधई थाना क्षेत्र के शेखनपुर गांव के निवासी घनश्याम तथा अमरनाथ के बीच आबादी की जमीन को लेकर विवाद है। इसी बात को लेकर के शुक्रवार को दोनों पक्ष आमने-सामने आ गए और जमकर मारपीट हुई जिसमें दोनों पक्षों की तरफ से 9 लोग गंभीर रूप से घायल हो गए जिसमें संगीता देवी 35 वर्ष, पत्नी के शवराम, राजकुमार 10 वर्ष पुत्र केशव राम ,घनश्याम 39 वर्ष पुत्र राम शिरोमण ,कोमल 17 वर्ष पुत्री घनश्याम, अंजू 36 वर्ष पत्नी श्यामलाल, गीत 37 साल पत्नी घनश्याम 14 वर्ष पुत्र घनश्याम शुभम 8 वर्ष तथा अमरनाथ 40 वर्ष पुत्र रामनिवास विजय कुमार 32 वर्ष को गंभीर चोट आई दोनों पक्ष घायलों को लेकर थाने पहुंच गए वहां पुलिस दोनों पक्ष को लेकर घायलों को इलाज के लिए अस्पताल भेज दिया। इस संबंध में थाना प्रभारी सत्येंद्र सिंह ने बताया कि आबादी की जमीन को लेकर दोनों पक्ष लगभग 10 दिन से भी विवाद कर रहे थे सुलह समझौता होने के बाद भी मारपीट कर लिया दोनों पक्ष की तहरीर मिली है मुकदमा पंजीकृत करके जांच की जा रही है।

नहीं मिला मुआवजा, हो रहा राष्ट्रीय राजमार्ग का निर्माण

अखंड भारत संदेश

पट्टी, प्रतापगढ़। राष्ट्रीय राजमार्ग का निर्माण किसान के खेत से होकर हो रहा है लेकिन उसे इसका मुआवजा प्रशासन द्वारा नहीं मिला है। पीड़ित ने इस संबंध में उपजिलाधिकारी पट्टी को प्रार्थना पत्र देकर मुआवजे की मांग की है। पट्टी तहसील क्षेत्र के पूरा गांव का रहने वाला राजबहादुर पुत्र राम लखन ने उप जिलाधिकारी को प्रार्थना पत्र देकर बताया कि उसके खेत से राष्ट्रीय राजमार्ग का निर्माण किया जा रहा है शासन प्रशासन द्वारा बलपूर्वक उसके खेत से राजमार्ग निकाल ले जाने से और उसे मुआवजा नहीं मिलना उसके साथ अन्याय है पीड़ित किसान ने प्रशासन से मुआवजा दिलाने की मांग की है।

नगर को साफ-सुथरा कर संक्रमणमुक्त बनाने में जुटी नगर पालिका

अखंड भारत संदेश

शहर में रोज हो रही सफाई, एंटी लार्वा व फागिंग

नगर में फागिंग करते नगर पालिका के कर्मचारी

प्रतापगढ़। शासन के निर्देश पर सात दिसम्बर से 13 दिसम्बर तक मनाये जा रहे विशेष सफाई अभियान के तहत शुक्रवार को नगर के सभी वार्डो में जहां नाले-नालियों की सफाई की गई, वहीं पूरे नगर में सेनेटाइशन, फागिंग एवं एंटी लार्वा का छिड़काव किया गया।

जानकारी देते हुए सफाई निरीक्षक संतोष कुमार सिंह ने बताया कि अध्यक्ष प्रेमलता सिंह व अधिशाषी अधिकारी मुदित सिंह के निर्देशन में शुक्रवार को बलीपुर मोहल्ले के नाले-नालियों की विधिवत सफाई की गई। यहां नाला क्लीनिंग मशीन से सफाई का कार्य किया गया। इसके अलावा नगर पालिका के विस्तारित क्षेत्र पिपई का पुरवा में नाला गैंग सफाई में जुटा रहा। उन्होंने यह भी बताया कि इस विशेष सफाई अभियान में दिन में बारह बजे से अपरान्ह तीन बजे तक नगर के सभी वार्डों में एक साथ सफाई का कार्य किया जा रहा है। इसी के साथ एंटी लार्वा का छिड़काव तथा शाम को फागिंग भी पांच-पांच वार्डों में कराया जा रहा है। नगर को साफ-सुथरा रखते हुए संक्रमणमुक्त बनाने में नगर पालिका जुटी हुई है।

निर्विरोध चुनें गये शिक्षक संघ के पदाधिकारी

लालगंज, प्रतापगढ़। नगर स्थित राम अंजोर मिश्र इण्टर कालेज मे शुक्रवार केा उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षक संघ के विद्यालय इकाई के पदाधिकारियो का निर्विरोध निर्वाचन हुआ। शिक्षको की बैठक मे सर्वसम्मति से पिछले वर्ष की गठित कार्यकारिणी को इस वर्ष भी यथावत बनाए रखने का निर्णय लिया गया। इसके तहत जमुना प्रसाद मिश्र अध्यक्ष व जनार्दन राय मंत्री तथा श्यामशंकर मिश्र वरिष्ठ उपाध्यक्ष एवं रोशन सिंह कनिष्ठ उपाध्यक्ष, दयाशंकर मिश्र कोषाध्यक्ष व सुनीत पाठक आय-व्यय निरीक्षक चुनें गये। वहीं राकेश त्रिपाठी तथा सत्यप्रकाश मिश्र एवं शिवराम वर्मा, कमलेश नारायण त्रिपाठी व सुरेश नारायण विमल को जिला प्रतिनिधि नामित किया गया। सर्वसम्मति से हुए निर्णय को लेकर शिक्षको मे खुशी देखी गयी।

शिक्षा की अलख को पं0 रामराज ने किया था साकार: श्याम किशोर

अखंड भारत संदेश

सद्भावना दिवस के रुप में मना पं0 रामराज का जन्मदिन

सद्भावना दिवस पर आयोजित कार्यक्रम में मौजूद श्याम किशोर शुक्ल व अन्य

प्रतापगढ़। रामराज इंटर कॉलेज पट्टी में स्वतंत्रता सेनानी पं. रामराज शुक्ल का जन्मदिवस सद्भावना समारोह के रूप में मनाया गया। कार्यक्रम की शुरूआत देवी सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण व दीप प्रज्ज्वलन के साथ ही कॉलेज परिसर में स्थापित पंडित रामराज शुक्ल व पंडित मुनीश्वर दत्त उपाध्याय की प्रतिमा पर माल्यार्पण करके किया गया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे ग्रामीण इंटर कॉलेज के अध्यक्ष पंडित श्याम किशोर शुक्ला ने कहा कि पंडित मुनीश्वरदत्त उपाध्याय की ओर से जनपद में जगाई गई शिक्षा की अलख को पंडित रामराज शुक्ल ने साकार किया। उन्होंने पं. मुनीश्वर दत्त से मिली जिम्मेदारी का निर्वहन बहुत ही बेहतर ढंग से किया था। प्रतापगढ़ के शिक्षा जगत में उनका योगदान अनुकरणीय है। पंडित जी की प्रतिमा पर माल्यार्पण व आए हुए अतिथियों का स्वागत विद्यालय के प्रधानाचार्य मेजर विद्याधर त्रिपाठी एवं विद्यालय के समस्त शिक्षको के द्वारा किया गया। कार्यक्रम के समापन में विद्यालय के प्रवक्ता महेंद्र शुक्ला के द्वारा आए हुए सभी अतिथियों का हृदय से आभार व्यक्त किया कार्यक्रम में स्नातकोत्तर महाविद्यालय के प्राचार्य डॉक्टर अखिलेश पांडे एवं राम भजन अग्रहरि जेपी पांडे मिथिलेश त्रिपाठी राजेश दुबे राकेश मिश्रा फूलचंद पांडे सतीश पांडे इंद्रमणि मिश्र राज मणि त्रिपाठी नीलाभ मिश्र प्रमोद दुबे आदि विद्यालय के समस्त शिक्षक एवं कर्मचारी मौजूद रहे। र्यक्रम का संचालन विद्यालय के प्रवक्ता अरुण मिश्रा द्वारा किया गया।

नगर मे निकाली गई तिरंगा यात्रा, लगे भारत माता के जयघोष

लालगंज, प्रतापगढ़। आजादी के पचहत्तर वर्ष को लेकर शुक्रवार को नगर मे तिरंगा यात्रा निकाली गयी। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के तत्वाधान मे नगर मे अस्पताल गेट से कालाकांकर रोड व तहसील रोड होते हुए तिरंगा यात्रा चैक पर पहुंची। तिरंगा यात्रा मे शामिल युवाओं तथा भाजपाईयों व संघ स्वयं सेवको को भारत माता के गगनभेदी जयघोष लगाते देखा गया। तिरंगा यात्रा मे अधिवक्ताओं तथा छात्र-छात्राओं व व्यापारियों की भी उत्साहजनक भागीदारी दिखी। तिरंगा यात्रा का संयोजन संघ के नगर कार्यवाह मनोज तिवारी, खण्ड कार्यवाह कमलेश वैश्य, व जिला प्रचारक देवेश सिंह ने किया।

आठ आरोपियों के खिलाफ बलवा तथा मारपीट की रिपोर्ट दर्ज

अखंड भारत संदेश

लालगंज, प्रतापगढ़। कोतवाली पुलिस ने आठ आरोपियो के खिलाफ रंजिश को लेकर मारपीट तथा दहशतगर्दी को लेकर बलवा एवम गालीगलौज व धमकी तथा तोडफोड का केस दर्ज किया है।

कोतवाली के तिलौरी निवासी मुर्शीद पुत्र युनुस खॉन ने दी गई तहरीर मे कहा है कि सात दिसंबर को शाम पांच बजे गांव के समून के पुत्र नाजिम तथा सउद व सउद के पुत्र तप्सीर एवं अब्दुल रसीद के पुत्र अब्दुल कयूम व कलीम के पुत्र अल्ताब तथा मकसूद के पुत्र जीसान एवं सईद के पुत्र सईम तथा इमरान पुत्र कयूम ने तमंचे से लैस होकर उसके घर धावा बोल दिया। आरोपियो ने गालीगलौज करते हुए दरवाजे पर खड़ी उसकी बाइक तोडकर नष्ट कर दी। विरोध करने पर आरोपियो मे से एक ने तमंचे से लैस होकर जानलेवा धमकी दी। हमले मे पीड़ित की मां को गंभीर चोटें आयी है। शोर मचाने पर आरोपी हवाई फायर करते हुए दहशत का माहौल बनाने लगे। गांव के लोग दौडे तो आरोपी गाली देकर जानलेवा धमकी देते चले गये। तहरीर के आधार पर पुलिस ने गुरूवार की रात नाजिम समेत आठ के खिलाफ गंभीर धाराओं मे केस दर्ज किया है।

सत्य, धर्म तथा न्याय पर किसान की ऐतिहासिक जीतः प्रमोद

अखंड भारत संदेश

लालगंज, प्रतापगढ़। केन्द्रीय कांग्रेस वर्किंग कमेटी के सदस्य प्रमोद तिवारी तथा प्रदेश कांग्रेस विधानमण्डल दल की नेता आराधना मिश्रा मोना ने किसानो के एक वर्ष के सत्याग्रह की जीत को सत्य धर्म और तथा न्याय के रास्ते पर अन्नदाता किसान भगवान की ऐतिहासिक जीत करार दिया है। वहीं सीएलपी नेता आराधना मिश्रा मोना तथा सीडब्ल्यूसी मेंबर प्रमोद तिवारी ने मोदी सरकार पर किसानो की जमीन के मालिकाना हक को कम करने की कुत्सित साजिश की किसान आंदोलन के जरिए विफलता को सरकार के दम और अहंकार की भी कड़ी पराजय ठहराया है। प्रमोद तिवारी तथा कांग्रेस विधायक आराधना मिश्रा मोना ने यूपी मे कानपुर मे निर्दोष नागरिक की पुलिस पिटाई तथा विधानसभा के भाजपा के तीन विधायको की सदस्यता रदद होने पर भी कडी प्रतिक्रिया जताई है। शुक्रवार को जारी संयुक्त बयान मे प्रमोद तिवारी तथा जिले की रामपुरखास की विधायक आराधना मिश्रा मोना ने कहा कि एक वर्ष तक किसानो का उत्पीड़न करने वाली मोदी सरकार को किसानो तथा सरकार के बीच मे गहरी खाई तैयार करने के लिए रचा गया काला इतिहास भाजपा के माथे पर अमिट कलंक को कभी भी माफ नही करेगा।

पंकज सिंह बने भाजपा जिला आईटी के संयोजक

अखंड भारत संदेश

पंकज सिंह (पीपी)

प्रतापगढ़। आगामी विधानसभा चुनाव 2022 के मद्देनजर भाजपा संगठन ने अपनी मजबूत तैयारी शुरू कर दी है। सरकार की जानकारियों को लोगों तक पहुंचाने के लिए भाजपा आईटी एवं सोशल मीडिया विभाग की महत्वपूर्ण भूमिका रहेगी। इस कार्य हेतु संगठन ने एक बार पुनः पूर्व जिला आईटी संयोजक पंकज सिंह पर भरोसा जताया है। 2022 विधानसभा चुनाव की तैयारी जनपद के प्रत्येक बूथ स्तर तक संगठन ने की है। भाजपा जिला अध्यक्ष हरिओम मिश्र ने कहा संगठन आगामी विधानसभा चुनाव के मद्देनजर प्रत्येक कार्यकर्ता को उसके क्षमता के अनुसार कार्य दिया गया है और मुझे प्रसन्नता है कि प्रत्येक कार्यकर्ता संगठन कार्यों को पूरी निष्ठा और लगन के साथ निभा रहे हैं। इस अवसर पर जिला प्रभारी नागेन्द्र रघुवंशी, जिला महामंत्री राजेश सिंह, आशीष श्रीवास्तव, सतीश चैरसिया, पवन गौतम, जिला मंत्री व आईटी सोशल मीडिया प्रभारी रामजी मिश्रा, मीडिया प्रभारी राघवेंद्र शुक्ला, जिला मंत्री अनुराग मिश्रा, नितिन केसरवानी, सोशल मीडिया संयोजक देवेश त्रिपाठी, कार्यालय मंत्री मनोज विक्रम सिंह, विकास सिंह ददन, सुभाष मिश्र आदि ने संगठन निर्णय पर प्रसन्नता व्यक्त की।

खबर संक्षेप

लोक अदालत का आयोजन आज

कौशाम्बी। राष्ट्रीय लोक अदालत का आयोजन 11 दिसम्बर को आयोजित किया जा रहा है सचिव, जिला विधिक सेवा प्राधिकरण ने बताया है कि दिनांक 11 दिसम्बर 2021 को उ0प्र0 राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण के निर्देशन में जिला जज अध्यक्ष जिला विधिक सेवा प्राधिकरण की अध्यक्षता में दीवानी न्यायालय, कौशाम्बी में राष्ट्रीय लोक अदालत का आयोजन किया जायेगा। जिसमें मोटर दुर्घटना दावा याचिकाओं, पारिवारिक वाद, बैंक वसूली, विद्युत के मामले, श्रम सम्बन्धी, लेबर सम्बन्धी, जमीन सम्बन्धी, चालानी व अन्य प्रकार से संबंधित शमनीय वादों का निस्तारण किया जायेगा।

फिर एक पत्रकार के विरुद्ध दर्ज हुआ मुकदमा

कौशांबी। चायल विधानसभा क्षेत्र के विधायक संजय कुमार गुप्ता ने पत्रकार अमरनाथ झा के विरुद्ध कोखराज थाने में अमर्यादित भाषा मे फर्जी खबर चलाने का मुकदमा दर्ज कराया है पत्रकार पर आरोप है कि विधायक से नाजायज कार्य कराने का वह दबाव बना रहा था विधायक संजय कुमार गुप्ता का कहना है कि पत्रकार अमर नाथ झा के दबाव में नाजायज कार्य करने से से इनकार किया गया और पत्रकार अमरनाथ झा की डिमांड नहीं पूरी की गई तो उन्होंने सोशल मीडिया में अमर्यादित भाषा में फर्जी खबरें चलाकर बदनाम किया है इसके पहले भी जिले में कई पत्रकारों के विरुद्ध मुकदमा दर्ज हो चुका है।

अराजक तत्वों ने घर में लगाई आग

भरवारी कौशाम्बी। कोखराज थाना क्षेत्र के भरवारी कस्बे के मौलाना आजाद नगर किदवई नगर पुरानी बाजार निवासी मिन्नी के घर मे कुछ आराजक तत्वों ने रात में आग लगा दी जिससे घर मे रक्खा सारा सामान जलकर राख हो गया काफी प्रयास के बाद आग पर काबू पाया जा सका है मौके पर पहुची पुलिस ने जांच पड़ताल कर आरोपी की तलाश में जुटी है खबर लिखे जाने तक आरोपी पुलिस के पकड़ से बाहर है।

अल्फा की टक्कर से दो सिपाही घायल

कौशांबी। कोखराज थाना अंतर्गत शहजादपुर चौकी में तैनात दो सिपाही गौरव कुमार व सोनू यादव बाइक से कोखराज थाने जा रहे थे एन एच टू कोखराज के समीप अल्फा की टक्कर से दोनो सिपाही घायल हो गए है बताया जा रहा है कि सोनू यादव सिपाही के हाथ व पैर में गंभीर चोटें आई हैं !वही दूसरा साथी गौरव कुमार को भी चोटे आई है दोनों घायल सिपाहियों को नजदीकी अस्पताल में उपचार हेतु भेजा गया है।

निष्कासित प्रधानाचार्य ने किया वर्तमान प्रधानाचार्य पर प्राण घातक हमला

अखंड भारत संदेश

भरवारी कौशांबी। कस्बे के कस्तूरबा गांधी बालिका इंटर कॉलेज में निष्कासित प्रधानाचार्य नीलम ने नैतिकता की हदें पार कर गुंडी बनकर प्रधानाचार्य रेखा सिंह पर प्राणघातक हमला किया है दो मंजिल ऊपर छत से रेखा सिंह को धक्का देकर उनकी हत्या किए जाने का प्रयास निष्कासित प्रधानाचार्य नीलम ने किया है उनके धक्का दिए जाने के बाद किसी तरह से रेखा सिंह ने अपना बचाव कर जान बचाई है। दर्जनों शिक्षिकाओं के सामने प्रधानाचार्य पर प्राणघातक हमला किया गया है। मामले की सूचना पुलिस को दी गई है निष्कासित प्रधानाचार्य नीलम के आतंक अत्याचार से कस्तूरबा कॉलेज की शिक्षिकाएं और छात्राएं भयभीत हैं नैतिकता की शिक्षा देने की शपथ लेकर प्रधानाचार्य के पद पर पहुंची प्रधानाचार्य नीलम ने गलत तरीके से नियुक्ति हासिल की थी जिस पर उन्हें बर्खास्त कर दिया गया और कार्यवाहक प्रधानाचार्य के रूप में रेखा सिंह को जिम्मेदारी सौंप दी गई। विभाग से बर्खास्त किए जाने के बाद निष्कासित प्रधानाचार्य नीलम ने न्यायालय का

घटना के वक्त मौजूद शिक्षिकाएं

कस्तूरबा बालिका इं.का. का मामला

निष्कासित प्रधानाचार्य के पति पुलिस विभाग में है कार्यरत पुलिसिया रौब पर हमले की आशंका, विद्यालय के अभिलेख रजिस्टर और चाबी भी चोरी करने का निष्कासित प्रधानाचार्य पर लगा आरोप

दरवाजा खटखटाया लेकिन उन्हें वहां भी राहत नहीं मिल सकी जिस पर उन्होंने अपना मानसिक संतुलन खो दिया नीलम के पति पुलिस विभाग में तैनात है और पुलिसिया रौब के चलते निष्कासित प्रधानाचार्य नीलम शुक्रवार को विद्यालय परिसर पहुंची और प्रधानाचार्य रेखा सिंह पर प्राण घातक हमला कर दिया। रेखा सिंह को दो मंजिल ऊपर से धक्का देकर छत से नीचे फेंकने का भी प्रयास हुआ है जिसमें वह बाल-बाल बच गई हैं। इसके पहले भी कस्तूरबा कॉलेज के भीतर गुंडी बनकर नीलम कई बार आतंक अत्याचार कर चुकी हैं कालेज के अभिलेख और चाबियां चोरी करके नीलम प्रधानाचार्य विद्यालय से पहले ले जा चुकी हैं इस संबंध में प्रबंधक पितम्बर लाल केशरवानी से बात करने का प्रयास किया गया लेकिन उनके मोबाइल का स्विच ऑफ होने से उनसे बात नहीं हो सकी है मामले में जिला अधिकारी को शिकायती पत्र देकर प्रधानाचार्य रेखा सिंह ने आरोपियों पर कठोर कार्रवाई की मांग की है।

अब तक सामुदायिक शौचालय नही हो सका चालू

कौशांबी। सिराथू तहसील क्षेत्र के जमालमऊ में इन दिनों घोटाले का अम्बार लगा हुआ है धांधली चरम पर है और जिम्मेदार सरकारी रकम हजम करने में लगे हैं जिले में गांव गांव सामुदायिक शौचालय का निर्माण कराया गया था सामुदायिक शौचालय के निर्माण में ग्राम प्रधान और पंचायत सेक्रेटरी ने मिलकर सामुदायिक शौचालय का ढांचा खड़ा कर सरकारी रकम को डकार लिया है लेकिन सामुदायिक शौचालय उपयोग में आज तक नहीं आ सका इतना ही नहीं सामुदायिक शौचालय का गड्ढा चार फुट का बना कर लाखों रुपया का घोटाला भी कर लिया गया साफ सफाई के लिए समूह को ठेका दिया गया है और साफ सफाई के नाम पर बंद सामुदायिक शौचालयों में भुगतान किए जा रहे हैं जो बड़ी जांच का विषय है ताजा मामला सिराथू विकासखंड क्षेत्र के जमाल मऊ में चार फुट का गड्ढा व पंचायत भवन का पूरा रुपया निकाल कर खा गए वर्तमान ग्राम प्रधान भी इस घोटाले में लिप्त है। सामुदायिक शौचालय को अर्ध निर्मित छोड़ दिया गया है शौचालय में ताला बंद रहता है पूरी तरह से शौचालय उपयोग लायक नहीं है पूरे शौचालय व पंचायत भवन में आज तक काम पूरा नही हो सका जबकि रुपया पूरा निकल चुका। वहीं समूह को साफ सफाई का ठेका देकर पंचायत समिति ने 54 हजार रुपए का भुगतान प्रधान व सेक्रेटरी ने मिल कर बन्दर बाट कर योगी सरकार के स्वच्छ्ता अभियान को अधूरा छोड़ रखा है।

न्यूज झरोखा

प्रधानमंत्री रोजगार योजनांतर्गत करें 25.00 लाख तक का आवेदन

कौशाम्बी। जिला ग्रामोद्योग अधिकारी महेन्द्र कुमार मिश्र ने बताया है कि उत्तर प्रदेश खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड लखनऊ द्वारा संचालित प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (पीएमईजीपी) योजनान्तर्गत जनपद के ग्रामीण अंचल में उद्योग स्थापना हेतु बेरोजगार नवयुवकों व नवयुवतियों को उनके गांव स्तर पर ही रोजगार को बढ़ावा देने के उद्देष्य से उद्योग सेवा व उत्पादन क्षेत्र में उद्यम की स्थापना हेतु अधिकतम 25.00 लाख रुपए तक का ऋण बैंकों द्वारा दिलाये जाने का प्राविधान है। लाभार्थियों को परियोजना लागत का 35 प्रतिशत (अधिकतम धनराषि 8.75 लाख रुपए आरक्षित वर्ग के लिये) तक का अनुदान दिये जाने की व्यवस्था है। ग्रामीण क्षेत्र में उद्यम की स्थापना के उपरान्त 3 वर्ष तक 13 प्रतिशत अधिकतम ब्याज उपादान भी नियमानुसार लाभार्थी को प्राप्त हो सकेगा जिसके लिये आनलाइन आवेदन पत्र आमंत्रित किये जा रहे है आवेदन आनलाइन ही स्वीकार किये जायेंगे। आवेदक अपना आवेदन पत्र योजना के आनलाइन पोर्टल के माध्यम से चयन करते हुये आवेदन करें ताकि आवेदन किसी अन्य एजेन्सी के पास न जा सके। आनलाइन आवेदन करने के उपरान्त आवेदक अपना आवेदन पत्र समस्त आवष्यक प्रपत्रों के साथ कार्यालय विकास भवन, मंझनपुर में 20 दिसम्बर 2021 तक अवश्य जमा करें।

हरी लकड़ियां ले जा रहे माफिया को आखिर पुलिस ने पकड़ा

कोखराज कौशाम्बी। कोखराज क्षेत्र में हरियाली के दुश्मन व लकड़ी माफिया को शुक्रवार को कोखराज पुलिस ने हरे आम की लकड़ी लदी गाड़ी सहित पकड़ लिया पकड़े गए लकड़ी माफिया को वाहन समेत पुलिस थाने ले गई है बताते हैं कि कई वर्षों से लकड़ी माफिया इलाके में हरे पेड़ों को काटकर व्यवसाय कर रहा था लेकिन इस पर कानूनी शिकंजा नहीं कर पा रहा था लेकिन उसके पकड़े जाने के बाद हरे फलदार पेड़ों के कटान की लकड़ियों को पास कराने वाले पासर के भी होश उड़ गए है लकडी माफियाओं के वाहनों को पास कराने का ठेका पासर ही लेता था पूरे कोखराज क्षेत्र में लकड़ी माफिया और हरे पेड़ के कटान की लकड़ी के साथ माफिया को पुलिस के पकड़ते ही माफियाओं में दहशत का माहौल बना हुआ है।आम की लकड़ी लदी गाड़ी को पुलिस ने अपने कब्जे में ले लिया है बताया जाता है कि इलाके में राजेश नाम के लकड़ी माफिया हरे फलदार पेड़ों को काटकर पर्यावरण को समाप्त कर रहा है पुलिस ने हरे आम के पेड़ को काट कर ले जा रहे लकड़ी माफिया राजेश को वाहन में लदी लकड़ी समेत पकड़ा लिया है।

गौशाला में भी सुरक्षित नही है गाय : जयपाल जिद्दी

कौशाम्बी। गौशाला में भी गाय सुरक्षित नहीं रह गई है योगी सरकार में गौशाला अधिकारियों की कमाई का जरिया बन गया है जीवित गाय को कुत्ते नोच रहे है उक्त बातें आम आदमी पार्टी के नेता जयपाल जिद्दी ने कही हैं उन्होंने कहा कि जब शुक्रवार को मैं अपने पार्टी के कार्यकताओं के साथ पार्टी के प्रचार प्रसार के लिए फील्ड में निकला तो ग्राम बल्लहा चायल के गौशाला में गाय को कुत्ते नोच कर खाते दिखे तब मैं मौके पर जाकर कुत्तों को भगाया लेकिन मेरे देखते ही देखते गाय तड़प तड़प कर मर गई उन्होंने कहा कि यह दुख की बात है कि वहा एक भी कर्मचारी नहीं दिखे उन्होंने कहा कि गौशाला की अवस्था पर प्रदेश सरकार क्यों जांच नहीं करवा रही गौशाला के देखरेख के लिए मिलने वाली करोड़ों रुपए की रकम कहा गायब हो रही है कौन इसका जिम्मेदार है गौशाला की चौपट व्यवस्था की उचित जांच की जाए नही तो किसान आंदोलन के लिए बाध्य होंगे।

गांजा के साथ अभियुक्त गिरफ्तार

कौशाम्बी। थाना कोखराज पुलिस बल द्वारा अभियुक्त फूल सिंह उर्फ हनी पुत्र रामसुमिरन निवासी परसरा थाना कोखराज के कब्जे से 450 ग्राम नाजायाज गाजा बरामद होने पर अभियुक्त को गिरफ्तार कर उसका चालान न्यायालय कर दिया है।

वारण्टी अभियुक्त गिरफ्तार

कौशाम्बी। थाना कोखराज पुलिस बल द्वारा वारण्टी अभियुक्त राम स्वरूप पुत्र स्व० बच्चू कोरी निवासी टेगाई थाना कोखराज को गिरफ्तार कर विधिक कार्यवाही के पश्चात अभियुक्त को न्यायालय भेज दिया है।

मंचासीन अधिकारी शिक्षक और नेता तथा खेलकूद प्रतियोगिता में शामिल छात्राएं

खेलकूद से होता है बच्चो का सर्वांगीण विकास : डीआईओएस

अखंड भारत संदेश

जिला स्पोर्ट्स स्टेडियम में परिषदीय विद्यालयों की वार्षिक खेलकूद प्रतियोगिता संपन्न

कौशाम्बी। परिषदीय विद्यालयों की जनपद स्तरीय तीन दिवसीय खेलकूद प्रतियोगिता का समापन शुक्रवार को जिला स्पोर्ट्स स्टेडियम टेवा में हुआ।

जनपद के समस्त आठ विकासखंडों के विभिन्न विद्यालयों के छात्र-छात्राओं द्वारा तीन दिनों में दौड़, ऊंची कूद,लंबी कूद,कबड्डी, खो-खो, गोला फेंक, चक्का फेंक समेत कई प्रतियोगिताओं में प्रतिभाग किया गया।शुक्रवार को समापन समारोह के मुख्य अतिथि जिला विद्यालय निरीक्षक संतोष कुमार मिश्र ने विजेता खिलाड़ियों को पुरस्कृत किया। छात्रों को संबोधित करते हुए डीआईओएस ने कहा कि इस उम्र में खेलकूद से बच्चो का सर्वांगीण विकास होता है।भारत में खेल के क्षेत्र में अपार संभावनाएं हैं।खेलकूद प्रतियोगिता में बालिका वर्ग में सरसवां विकास खंड की छात्रा गीता देवी ने चैंपियनशिप प्राप्त की व बालक वर्ग में सरसवां के छात्र धीरज कुमार ने चैंपियनशिप हासिल किया प्रतियोगिता में ओवरऑल चैंपियनशिप में सरसवाँ विकास खंड प्रथम स्थान व मंझनपुर विकास खंड द्वितीय स्थान पर रहा। कार्यक्रम के समापन के अवसर पर प्राथमिक विद्यालय भरवारी ग्रामीण की छात्राओं ने पर्यावरण संरक्षण पर आधारित मोहक प्रस्तुति दी। जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी प्रकाश सिंह द्वारा आए हुए अतिथियों का स्वागत व आभार व्यक्त किया गया। सभी विजेता टीमों को व छात्र छात्राओं को पुरस्कार दिया गया इस मौके पर जिला क्रीड़ाधिकारी रुस्तम खान, मुलायम सिंह ओमदत्त त्रिपाठी, रामप्रताप लाली, रामबाबू दिवाकर,अशोक द्विवेदी, सुनील शुक्ला, विनोद सिंह, आशीष, उमेश चन्द्र तिवारी, गोरखनाथ मिश्र, विनोद कुमार श्रीवास्तव, मायापति त्रिपाठी, मो. हुसैन, प्रेमशंकर त्रिपाठी, जिला व्यायाम शिक्षक राजीव सिंह समेत सभी ब्लॉक के खेलकूद प्रभारी और कोच मौजूद रहे। कार्यक्रम का संचालन मारुति नंदन त्रिपाठी व पूनम सिंह ने किया।

गर्भवती महिलाओं के लिए हुआ विशेष शिविर का आयोजन

स्वास्थ्य शिविर में मरीजों का इलाज करती महिला चिकित्सक

अखंड भारत संदेश

प्रधानमंत्री सुरक्षित मातृत्व अभियान

टेढ़ी मोड़ कौशांबी। प्रधानमंत्री सुरक्षित मातृत्व अभियान के अंतर्गत सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र कड़ा कौशांबी मे अधीक्षक डॉ नीरज सिंह के निर्देशन मे गर्भवती महिलाओं के लिए विशेष शिविर का आयोजन किया गया जिसमें उनकी खून की जांच, पेशाब की जांच, वजन की जांच ,पेट की जांच, ब्लड प्रेशर की जांच करते हुए उच्च जोखिम वाली गर्भवती महिलाओं को चिन्हित करते हुए उपचारित किया गया इस अभियान में 150 महिलाओं का परीक्षण किया गया जिसमें 12 उच्च जोखिम वाली महिलाएं चिन्हित की गई महिला चिकित्सक के द्वारा गर्भवती महिलाओं को परामर्श देते हुए सेवा दी गई गंभीर एनीमिया से ग्रसित गर्भवती महिलाओं को आयरन सुक्रोज चढ़ाकर उपचारित किया गया इस अभियान का अनुश्रवण यूनिसेफ टी.एस.यू द्वारा किया गया है।

राहगीर से मारपीट कर नगदी और मोबाइल छीना

कौशांबी। काली पल्सर सवार लुटेरों का आतंक फिर शुरू हो गया है गोमती बंद कर घर जा रहे युवक को मारपीट कर पल्सर सवार नकाबपोश बदमाशों ने मोबाइल और नगदी छीन ली है मामला कौशांबी थाना क्षेत्र का है। जानकारी के मुताबिक नारायण द्विवेदी पुत्र धर्मेंद्र द्विवेदी निवासी दाई का पुरवा थाना कौशांबी इसी थाना क्षेत्र के विजया चौराहे पर गोमती रखकर पान चाय का व्यवसाय कर परिवार का जीविकोपार्जन करते हैं 9 दिसंबर की शाम 7 बजे लागभग वह दुकान बंद कर घर जा रहे थे जैसे ही वह जोगापुर के पास पहुंचे कि काली पल्सर बाइक सवार नकाबपोश दो युवकों ने उन्हें रोक लिया और तमंचा लहराते हुए उन्हें डरा धमका कर उनसे पैसे छीनने का प्रयास किया जब नारायण द्विवेदी ने युवकों का विरोध किया तो उनके साथ पल्सर सवार युवकों ने मारपीट शुरू कर दी उनके जेब में रखा मोबाइल और 970 रुपए नगद छीनकर पल्सर बाइक सवार युवक फरार हो गए हैं इसके पूर्व भी काली पल्सर बाइक सवार का आतंक था और काली पल्सर नकाबपोश बाइक सवार युवको ने कई घटनाओं को अंजाम दिया था लेकिन पुलिस का शिकंजा कसने पर काली पल्सर बाइक सवार युवक भूमिगत हो गए थे जो इन दिनों फिर सक्रिय हैं।

प्राचीन ज्वाला देवी मन्दिर में भव्य रोशनी पूजा के साथ विशाल भंडारे का हुआ आयोजन

अखंड भारत संदेश

कौशाम्बी। नगरपंचायत दारानगर कड़ाधाम के दारानगर ज्वालन पर स्थित प्राचीन ज्वाला माता मन्दिर परिसर में गुरुवार की शाम भव्य रोशनी पूजा एवं विशाल भंडारे का आयोजन किया गया इस दौरान हजारों भक्तों ने माता रानी का दर्शन कर भंडारे में प्रसाद ग्रहण किया। दारानगर गांव के मजरा ज्वालन पर स्थित प्राचीन ज्वाला देवी मन्दिर में हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी भव्य रोशनी पूजा एवं विशाल भंडारे का आयोजन किया गया, मन्दिर के प्रबंधक हनुमान प्रसाद मोदनवाल द्वारा माता ज्वाला देवी के मन्दिर को पवित्र जल से धुलवा कर साफ सफाई कराई गई तद्पश्चात मन्दिर को सुन्दर फूलों झालरों व गुब्बारे आदि से सजवाया गया,मन्दिर प्रांगण में आये पुरोहित निखिल महाराज द्वारा विधिविधान से मंत्रोच्चारण के साथ हवन कराकर मन्दिर स्थित पवित्र कुण्ड को जल से भराकर पूजा का शुभारम्भ किया गया, मंदिर के प्रबंधक हनुमान प्रसाद मोदनवाल द्वारा माँ ज्वालन देवी को फल फूल हलवा पुरी का भोग लगाकर उनकी आरती पूजा की गई इसके बाद

भंडारे का प्रसाद ग्रहण करते भक्तगण

भंडारे का कार्यक्रम शुरू हुआ मां ज्वाला देवी के विशाल भंडारे में दारानगर के अलावा शीतला धाम देवीगंज फरीदा गंज सैनी सहित आधा दर्जन गांवों से आये हजारों भक्तों ने प्रसाद ग्रहण कर माता से घर परिवार की सुख शांति की कामना की। रोशनी पूजा के अवसर पर विधायक सिराथू शीतला प्रसाद पटेल, एसडीएम चायल राजेश श्रीवास्तव, एआरओ आर एस यादव, वरिष्ठ, भाजपा नेता अरुण केसरवानी, भाजपा नेता पप्पू मोदनवाल, सपा नेता आनन्द मोहन पटेल, सपा नेता होरीलाल गौतम, समाजसेवी अतहर अब्बास, भगवानदीन मौर्य, भाजपा नेता एसपी सोनकर, दिनेस सोनकर सहित हजारों की संख्या में माता रानी के भक्त शामिल रहे।

बाइक सवारों को ट्रक ने रौंदा एक की मौत दो गंभीर घायल

अखंड भारत संदेश

सड़क पर गड्ढे के चलते फिसली बाइक के बाद हुआ दर्दनाक हादसा

कोखराज कौशांबी। कोखराज थाना क्षेत्र के टेडी मोड सहजादपुर तिराहे के पास बाइक सवारों को ट्रक ने रौंद दिया है हादसे में घटनास्थल पर एक बाइक सवार की मौत हो गई है और दो बाइक सवार गंभीर घायल हैं हादसे की जानकारी मिलते ही घटनास्थल पर ग्रामीणों की भीड़ लग गई है और ट्रक चालक को ग्रामीणों ने पकड़ कर लिया है मामले की सूचना ग्रामीणों ने स्थानीय पुलिस को दिया है मौके पर पहुंची पुलिस ने घायलों को इलाज के लिए अस्पताल में भर्ती कराया है और मृतक युवक के शव को कब्जे में लेकर पुलिस ने पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया है हादसे की जानकारी मिलते ही घायलों और मृतकों के परिजन घटनास्थल पर पहुंच गए हैं

दुर्घटना स्थल पर ट्रक व बाइक तथा लोगों की भीड़

घटनाक्रम के मुताबिक कोखराज थाना क्षेत्र के जरहुआ निवासी कल्लू पटेल उम्र लगभग 35 वर्ष अपने दो अन्य साथियों के साथ बाइक से सिराथू तहसील गए थे जहां से वह शुक्रवार की शाम लगभग 6:30 बजे बाइक से वापस अपने गांव जरहुआ लौट रहे थे जैसे ही बाइक सवार कोखराज थाना क्षेत्र के टेढ़ी मोड़ सहजादपुर तिराहे के पास पहुंचे कि सड़क पर गड्ढे की वजह से उनकी बाइक फिसल गई और तीनों बाइक सवार सड़क पर गिर पड़े इसी बीच तेज गति से आ रहे ट्रक ने बाइक सवारों को रौंद दिया हादसे में घटनास्थल पर कल्लू पटेल की मौत हो गई है उनके अन्य 2 साथी हादसे में गंभीर घायल हैं हादसे की जानकारी पर घटनास्थल पर ग्रामीणों की भीड़ जुट गई है और हादसे के बाद भाग रहे ट्रक चालक को ग्रामीणों ने पकड़ लिया है मामले की सूचना ग्रामीणों ने स्थानीय पुलिस को दिया है घटनास्थल पर पहुंची पुलिस ने मृतक के शव को कब्जे में लेकर पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया है और हादसे में घायल दोनों युवकों को इलाज के लिए अस्पताल में भर्ती कराया है पुलिस ने ट्रक और चालक को अपने हिरासत में ले लिया है घटना की जानकारी मिलने पर मृतक और घायलों के परिजन घटनास्थल पर पहुंच गए हैं समाचार लिखे जाने तक घायलों का नाम पता नहीं मालूम हो सका है।

वर्षों से शुक्लन का पुरवा में बंद है सफाई व्यवस्था

कौशांबी। विकासखंड मंझनपुर बिकास खण्ड क्षेत्र के शुक्लन का पुरवा गांव में बरसों से सफाई व्यवस्था पूरी तरह से बंद है सफाई कर्मी गांव नहीं जाता है फिर भी बिना ड्यूटी के उसे विभाग द्वारा वेतन मिल रहा है मोदी सरकार की स्वच्छ भारत अभियान योजना की चपत लगाकर सफाई कर्मी प्रत्येक महीना मोटी रकम वेतन के नाम पर वसूल रहा है ड्यूटी में तैनात सफाई कर्मी के शुक्लन का पुरवा गांव ना पहुंचने से पूरे गांव में गंदगी व्याप्त है नालियां चोक हो गई हैं जिससे पानी का बहाव नहीं है जगह-जगह कूड़े के ढेर लगे हैं नाली में गंदगी के भराव और कूड़े के ढेर से उठने वाली दुर्गंध से ग्रामीणों का जीना मुहाल है लेकिन सफाई कर्मी की तानाशाही पर रोक नहीं लग सकी है लोगों ने मामले की शिकायत विकास खंड कार्यालय में कर सफाई कर्मी को बर्खास्त कर नए सफाई कर्मी की तैनाती की मांग की है।

बालीपुर टाटा गांव में पांच दिवसीय धनुष यज्ञ मेला आरंभ

अखंड भ्झारत संदेश

72 वर्षों से निरंतर अगहन मास में बलीपुर टाटा में लगता है विशाल मेला

कौशाम्बी। चायल तहसील क्षेत्र के अंतर्गत ग्रामसभा बलीपुर टाटा का ऐतिहासिक धनुष यज्ञ मेला 12 दिसंबर से आरंभ होकर 17 दिसंबर को संपन्न होगा धर्म ग्रंथों के आधार पर अगहन माह में प्रभु श्री राम और माता सीता का विवाह संपन्न हुआ था इसी मान्यता को लेकर बालीपुर टाटा गांव में अगहन मास में रामलीला आयोजन में धनुष यज्ञ का आयोजन कर प्रभु श्री राम और सीता का विवाह प्रत्येक वर्ष संपन्न कराया जाता है कार्यक्रम में इलाके के हजारों लोग उपस्थित होते हैं और इस मेला में आसपास के कई जनपद के व्यापारी अपनी दुकानें सजा कर मेला का आकर्षण बढ़ा देते हैं।

उक्त आशय की जानकारी देते हुए मेला अध्यक्ष श्रीमती पुष्पा देवी ग्राम प्रधान ने बताया कि उक्त मेला प्रथम गणतंत्र दिवस के उपलक्ष में सन 1950 से हर वर्ष लगता है यह मेल अपनी ऐतिहासिकता के लिए हुए गंगा जमुनी तहजीब का प्रतीक है साथ ही जिला कौशांबी का प्रसिद्ध मेला है मेले में जनपद कौशांबी के साथ साथ चित्रकूट धाम, फतेहपुर, प्रतापगढ़, प्रयागराज, आदि जनपदों के व्यापारी आते हैं और गृहस्थी की हर सामग्री का विक्रय करते हैं मेले में लगभग 5000 दर्शक आते हैं और मेले का लुफ्त उठाते हैं रात्रि में विभिन्न प्रकार की सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन मेला में होता है।

बलीपुर टाटा गांव में 72 वर्षों से रामलीला का आयोजन होता है सुरक्षा व्यवस्था का पुख्ता दायित्व चरवा थाना अध्यक्ष को दिया गया है मेले में दूसरे दिन दोपहर 12:00 बजे से शाम 5:00 बजे तक कलाकारों द्वारा धनुष यज्ञ रामलीला का मंचन किया जाता है जिसमें धनुष भंग परशुराम लक्ष्मण संवाद का मंचन आकर्षक ढंग से रामलीला कलाकारों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है भगवान श्रीराम व माता सीता के परिणय विवाह को आधार मानकर मेला का आयोजन अगहन मास में आयोजित किया जाता है धार्मिक ग्रंथों के अनुसार भगवान श्री राम का सीता के साथ परिणय अगहन मास में ही हुआ था इसका उल्लेख श्री रामचरितमानस में भी है इस वर्ष मेला अध्यक्ष ग्राम प्रधान श्रीमती पुष्पा देवी, मेला उपाध्यक्ष वीरेंद्र कुमार प्रधान पति, मेला कोषा अध्यक्ष धर्मेंद्र कुमार साहू प्रधान प्रतिनिधि,मेला प्रबंधक श्री भंवर सिंह यादव, महामंत्री नर्मदा प्रसाद वर्मा,मेला मीडिया प्रभारी गणेश साहू, मेला कार्यकारणी सदस्य टेनी यादव, शिव प्रसाद विश्वकर्मा, अगनु भारतीय, उदल भारतीय, फुत्तन भारतीय, देव शरन भारतीय, तीरथ भारतीय, लालजी भारतीय, श्री श्याम यादव, राजू विश्वकर्मा, संजू साहू, सुरेंद्र कुमार साहू, एवं समस्त ग्रामवासी के सहयोग से मेला आयोजित होता है।

सम्पादकीय

अलविदा जनरल

देश के पहले सीडीएस के रूप में उन्होंने भारतीय सेना के आधुनिकीकरण और एकीकरण (थिएटराइजेशन) की भी प्रक्रिया शुरू करवाई। हालांकि ये दोनों कार्य आसान नहीं थे, इनमें कई सारी जटिलताएं थीं। इसलिए ये प्रक्रिया तेजी से नहीं आगे बढ़ पा रही थी, लेकिन अपनी प्रकृति के अनुरूप जनरल रावत एक-एक कर के सभी मुश्किलें दूर करने में लगे हुए थे। चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ (सीडीएस) जनरल बिपिन रावत की बुधवार को एक हेलिकॉप्टर दुर्घटना में हुई असामयिक मौत ने पूरे देश को स्तब्ध कर दिया है। उनकी अगुआई में सेना एक साथ दो सरहदों पर तनाव से उपजी असाधारण चुनौतियों का बड़ी कुशलता से सामना कर रही थी। देश के पहले सीडीएस के रूप में उन्होंने भारतीय सेना के आधुनिकीकरण और एकीकरण (थिएटराइजेशन) की भी प्रक्रिया शुरू करवाई। हालांकि ये दोनों कार्य आसान नहीं थे, इनमें कई सारी जटिलताएं थीं। इसलिए ये प्रक्रिया तेजी से नहीं आगे बढ़ पा रही थी, लेकिन अपनी प्रकृति के अनुरूप जनरल रावत एक-एक कर के सभी मुश्किलें दूर करने में लगे हुए थे।

उन्होंने ठान रखा था कि बतौर सीडीएस कार्यकाल पूरा होने तक इन दोनों प्रक्रियाओं को एक मुकाम तक जरूर पहुंचा देंगे। जनरल रावत अप्रिय होने का जोखिम उठाकर भी कड़े फैसले लेने के लिए जाने जाते थे। वह खुलकर अपनी बात रखने में यकीन रखते थे। इस वजह से उनके कुछ बयानों को लेकर जब-तब विवाद भी होते रहे। उदाहरण के लिए सीएए विरोधी आंदोलन के दौरान दिए गए उनके बयान को न केवल अनावश्यक बल्कि उनके कार्यक्षेत्र का उल्लंघन भी बताया गया। ऐसे ही जम्मू कश्मीर में आतंकवादियों की लिंचिंग को सही ठहराने वाले उनके बयान से भी सहमति नहीं जताई जा सकती। वायु सेना को आर्मी की एक सहायक शाखा बताने वाला उनका बयान भी सैन्य हलकों में बेवजह असंतोष पैदा करने वाला माना गया। इन सबके बावजूद जनरल बिपिन रावत अपनी रणनीतिक क्षमता, अपने विजन और व्यापक अनुभव की बदौलत कठिन चुनौतियों के बीच सेना का सफलतापूर्वक मार्गदर्शन करते रहे। उन्हें नॉर्थन और ईस्टर्न दोनों कमांड में काम करने का अनुभव था। इसके अलावा वह सदर्न कमांड का भी नेतृत्व कर चुके थे। वह जम्मू कश्मीर और नॉर्थ ईस्ट दोनों जगहों पर काउंटर इंसर्जेंसी ऑपरेशंस का हिस्सा रहे थे और 1987 में सुमदोरॉन्गचू में पीपल्स लिबरेशन आर्मी से हुई झड़प के दौरान उनकी बटालियन अरुणाचल प्रदेश में एलएसी पर तैनात थी। ऐसे साहसी, अनुभव संपन्न और दूरदर्शितापूर्ण जनरल का एक हेलिकॉप्टर दुर्घटना में इस तरह चला जाना बेहद दुर्भाग्यपूर्ण है। हालांकि कुछ हलकों से साजिश की आशंका भी व्यक्त की गई है, लेकिन ऐसे संवेदनशील मामलों में किसी भी तरह की कयासबाजी से बचा जाना चाहिए। हां किसी तरह के संदेह के लिए गुंजाइश भी नहीं छोड़ी जानी चाहिए। दुर्घटना के हालात की जांच के आदेश दे दिए गए हैं। घटनास्थल से ब्लैकबॉक्स और वॉयस रिकॉर्डर भी बरामद हो चुके हैं। इसलिए उम्मीद की जानी चाहिए कि जांच में इस मामले का पूरा सच सामने आ जाएगा और ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना की पुनरावृत्ति रोकने के लिए सभी आवश्यक कदम यथाशीघ्र उठाए जाएंगे। फिलहाल पहली जरूरत जनरल बिपिन रावत की जगह किसी अन्य काबिल ऑफिसर को सीडीएस पद पर नियुक्त करने की है ताकि सेना का यह सर्वोच्च पद अधिक समय तक खाली न रहे। अच्छी बात है कि यह प्रक्रिया शुरू कर दी गई है।

जनरल बिपिन रावतः हवाएं खुद तुम्हारा तराना गाएंगी

प्रमोद भार्गव

प्रशंसा और चापलूसी से दूर रहने वाले अप्रतिम योद्धा एवं तीनों सेनाओं के समन्वयक (चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ) बिपिन रावत ने एक टीवी कार्यक्रम में कहा था कि खामोशी से बनाते रहो पहचान अपनी, हवाएं खुद तुम्हारा तराना गाएंगी। तमिलनाडू में हेलीकॉप्टर दुर्घटना में शहादत के बाद बिपिन रावत की उपलब्धियों के तराने पूरा देश गा रहा है। जनरल रावत भारतीय सेना के तीनों अंगों को नवीनतम तकनीक और शक्तिशाली हथियारों के साथ 21वीं सदी में ले जाने के सपने देखते रहे। इसीलिए उन्होंने सेना की प्रतिरक्षात्मक संरचना में अनेक बदलाव किए और सेना को सांगठनिक रूप से मजबूती दी। उनकी सैन्य बल संबंधी परिकल्पनाओं को परिणाम तक पहुंचाने के लिए ही थल, वायु और नभ सेनाओं में समन्वय बनाए रखने की दृष्टि से सीडीएस का पद भारत सरकार ने सृजित किया और इसकी दो साल पहले जिम्मेदारी जनरल बिपिन रावत को सौंपी। इस चुनौती को न केवल उन्होंने स्वीकारा, बल्कि गरिमा भी प्रदान की।दरअसल सीमांत इलाकों में पड़ोसी देशों की भारत में आतंक और अराजकता फैलाने की जो मंशा आजादी के समय से ही रही है, उसके लिए ऐसे पद की संरचना जरूरी थी। हालांकि इस पद की जरूरत कारगिल युद्ध के समय से ही की जाने लगी थी। अभी तक तीनों सेनाएं स्वतंत्र फैसला लेने की अधिकारी थीं। इस कारण युद्ध के समय त्वरित और परस्पर सहमति से फैसले नहीं हो पाने के कारण विसंगतियों का सामना मैदान में काम करने वाले सैनिकों को भुगतना होता था। इस नाते दो लक्षित हमले (सर्जिकल स्ट्राइक) म्यांमार और पीओके में सफलतापूर्वक किए। अनर्गल प्रलाप करने वाले नेताओं को भी रावत लताड़ते रहे हैं। थल सेना अध्यक्ष रहने के दौरान बिपिन रावत ने राजनेताओं को सीख देकर खलबली मचा दी थी। रावत ने दिल्ली में आयोजित एक स्वास्थ्य सम्मेलन में कहा था, नेता वे नहीं, जो लोगों को गलत दिशा में ले जा रहे हैं, ये अनेक शहरों में भीड़ को आगजनी और हिंसा के लिए उकसा रहे हैं। उन्होंने आगे कहा, नेता वही हैं, जो आपको सही दिशा में ले जाएं। आपको सही सलाह दें एवं आपकी देखभाल सुनिश्चित करें।

रावत ने ऐसा एनआरसी, सीएए एवं एनपीआर के विरोध में देश की संपत्ति को नुकसान पहुंचा रहे तथा पुलिस व सुरक्षाबलों पर पत्थरबाजी का नेतृत्व कर रहे विपक्षी दलों के नेताओं के परिप्रेक्ष्य में कहा था। सेना प्रमुख की इन दो टूक बातों ने युवाओं को गुमराह कर रहे नेताओं को सबक सिखाने का काम किया था। वे रावत ही थे, जिन्होंने कश्मीर के उन पत्थरबाज युवाओं को भी ललकारा था, जो सुरक्षाबलों पर पत्थर बरसाने से बाज नहीं आ रहे थे। उन्होंने कड़ा संदेश देते हुए कहा था, जो लोग पाकिस्तान और आईएस के झंडे लहराने के साथ सेना की कार्यवाही में बाधा पैदा करते हैं, उन युवकों से कड़ाई से निपटा जाएगा।

इस बयान को सुनकर कथित मानवाधिकारवादियों ने बिपिन रावत की खूब आलोचना की थी। कांग्रेस और पीडीपी नेता भी इस निंदा में शामिल थे। उन्हें हिदायत दी गई कि सेना को सब्र खोने की जरूरत नहीं है। किंतु इस बयान के परिप्रेक्ष्य में ध्यान देने की जरूरत थी कि सेनाध्यक्ष को इन कठोर शब्दों को कहने के लिए कश्मीर में आतंकियों ने एक तरह से बाध्य किया था। घाटी में पाकिस्तान द्वारा भेजे गए आतंकियों के हाथों शहीद होने वाले सैनिकों की संख्या 2016 में सबसे ज्यादा थी। इन्हीं हालात से पीड़ित होकर जनरल रावत को दो टूक बयान देना पड़ा था।

रावत के इस बयान के बाद जब अलगाववादियों और पत्थरबाजों पर शिकंजा कसा तब देखने में आया कि कश्मीर में आतंक की घटनाएं घटती चली गई। इस परिप्रेक्ष्य में रावत ऐसे विरले सेनानायक रहे हैं, जो घाटी में पाकिस्तान प्रायोजित आतंकी घटनाओं पर मुखर प्रतिरोध जताते रहे। चीन की पूर्वोत्तर क्षेत्र डोकलाम में घुसपैठ को नियंत्रित करने में भी उन्होंने अहम भूमिका निभाई थी। इसी तरह पांच अगस्त 2019 को जब जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद-370 और 35-ए को हटाने की संसद में कार्यवाही की गई थी तब भी घाटी में शांति कायम रखने में उनकी अहम भूमिका रही थी। इन्हीं कामयाबियों के चलते उन्हें जनवरी-2020 में सरकार ने सीडीएस की कमान सौंपी थी। 1999 में कारगिल युद्ध के बाद बनी समिति के सुझाव पर करीब 21 साल बाद यह फैसला नरेंद्र मोदी सरकार ने लिया था। इसमें दो राय नहीं कि बिपिन रावत पाक प्रायोजित आतंकवाद, चीन की आक्रामकता और अफगानिस्तान के हालत से उपजी चुनौतियों का बेखौफ होकर सामना करने में लगे रहे। वे दो-दो सर्जिकल स्ट्राइक को अंजाम तक पहुंचा पाए। जनरल रावत के नेतृत्व में पहला लक्षित हमला म्यांमार में घुसकर किया गया और दूसरा पाकिस्तान के विरुद्ध पीओके एवं बालाकोट में किया गया। जिसके बाद पाक अधिकृत कश्मीर में युवाओं को आतंकवादी बनाने के प्रशिक्षण शिविर लगभग खत्म हो गए। इन हमलों के जरिए उन्होंने साहसिक और देश का सैन्य गौरव बढ़ाने का काम किया। सीडीएस बिपिन रावत की शहादत के साथ ऐसा बहुआयामी प्रतिभा का धनी सैनिक देश से चला गया, जो सेना को 21वीं सदी में होने वाली लड़ाई के लिए सेना को सक्षम बनाने में लगा था। हाल ही में उन्होंने कोरोना ओमिक्रॉन के बारे में कहा था कि यह वायरस जैविक युद्ध के लिए तैयार किया गया विषाणु भी हो सकता है, इसलिए इससे सामना करने के लिए सेनाएं तैयार रहें। इस शूरवीर को विनम्र नमन एवं श्रद्धांजलि।

इन्हें अचानक क्यों आने लगी मथुरा की याद?

उमेश चतुर्वेदी

चुनाव के ठीक पहले सियासी मैदान के शूरमाओं की ओर से बयान आएं तो उनके राजनीतिक अर्थ निकाले ही जाएंगे। अगर बयान आबादी के लिहाज से सबसे बड़े और राजनीति के हिसाब से सबसे अहम राज्य उत्तर प्रदेश से जुड़ा हो तो उसका विश्लेषण कुछ ज्यादा ही होगा। यहां प्रसंग उत्तर प्रदेश के उपमुख्यमंत्री केशव प्रसाद मौर्य के उस ट्वीट का है, जिसमें उन्होंने कहा था, ह्यअयोध्या और काशी में भव्य मंदिर निर्माण का काम जारी है, मथुरा की तैयारी है। याद किया जा सकता है कि साल 2003 के राजस्थान, छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश के चुनावों में बीजेपी ने एक नई परिपाटी डालने की कोशिश की थी। तब केंद्र में वाजपेयी की अगुआई वाली सरकार थी। उस वक्त बीजेपी के चुनावी रणनीतिकार प्रमोद महाजन ने तीनों राज्यों के चुनावों के लिए ह्यबीएसपीह्ल को मुद्दा बताया था। बीएसपी यानी बिजली, सड़क और पानी।

विकास पर जोरः साफ शब्दों में कहें तो बीजेपी ने 18 साल पहले चुनावी राजनीति के लिए विकास के मुद्दे को पहले पायदान पर रखना शुरू किया था। साल 2014 और 2019 के संसदीय चुनावों में नरेंद्र मोदी ने भी विकास को सबसे ऊपर रखा था। हालांकि बीजेपी के अब तक के उभार में राम मंदिर आंदोलन की भी बड़ी भूमिका रही है। हर चुनाव में कमोबेश वह इस मुद्दे के इर्द-गिर्द रहती भी आई है। लेकिन हाल के कुछ चुनावों में बीजेपी ने प्रमुखता से सिर्फ विकास का मुद्दा उठाया है। हिंदुत्व और राममंदिर से जुड़े मुद्दों को उसने उनके बाद ही रखा है। यही वजह है कि केशव प्रसाद मौर्य ने जब मथुरा का मुद्दा उठाया तो उसके पीछे के अर्थ तलाशे जाने लगे। साल 2017 में उत्तर प्रदेश की कमान संभालने के बाद से अब तक योगी आदित्यनाथ ने राजनीति की दुनिया में लंबी यात्रा तय की है। धीरे-धीरे वह बीजेपी की राजनीति के केंद्र में आते जा रहे हैं। हाल ही में हुई राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक में पार्टी आलाकमान ने उनके हाथों राजनीतिक प्रस्ताव पेश करवाकर एक तरह से उनकी अहमियत को ही स्थापित करने की कोशिश की है। इन सबके बावजूद एक सच यह भी है कि साल 2017 की उत्तर प्रदेश की जीत के एक स्तंभ केशव प्रसाद मौर्य भी रहे। उन दिनों पार्टी के वही अध्यक्ष थे। इस नाते मुख्यमंत्री पद पर उनकी निगाह भी रही ही होगी। लेकिन मुख्यमंत्री पद की दौड़ में वह पिछड़ गए। बेशक उत्तर प्रदेश की शासन व्यवस्था में उन्हें नंबर दो का पद हासिल हुआ है, लेकिन शायद उनकी उम्मीदें बरकरार हैं। कुछ राजनीतिक जानकार मौजूदा दौर को हिंदुत्व का नवजागरण काल मानते हैं। केरल के राज्यपाल आरिफ मोहम्मद खान कहते रहे हैं कि बहुसंख्यक वैचारिकी के उभार की वजह अल्पसंख्यक तुष्टिकरण की राजनीति रही है। नैरेटिव केंद्रित राजनीति का भी हिंदुत्व दर्शन और विचार की बुनियाद को मजबूत करने में महत्वपूर्ण योगदान है। केशव प्रसाद मौर्य की राजनीतिक यात्रा विश्वहिंदू परिषद के दिग्गज अशोक सिंघल की छत्रछाया में शुरू हुई और आगे बढ़ी। इसलिए यह मानने में कोई हर्ज नहीं है कि मौर्य इन तथ्यों को अच्छी तरह समझते होंगे। मंडल आयोग के बाद राजनीति जिस तरह पिछड़ावाद की ओर उन्मुख हुई है, उसकी वजह से विभिन्न दलों में स्वाभाविक रूप से पिछड़े वर्गों से राजनीतिक नेतृत्व उभरा। कई दलों ने सायास तरीके से भी पिछड़े वर्ग के नेतृत्व को उभारने की कोशिश की। इस प्रक्रिया से बीजेपी भी अलग नहीं है। इसका असर जमीनी स्तर पर भी दिखता है। गैर-यादव पिछड़ी जातियों में बीजेपी की गहरी पैठ इसका ठोस उदाहरण है। केशव प्रसाद मौर्य पिछड़े वर्ग से ही आते हैं। इसलिए अगर चुनाव बाद के नए समीकरणों में उन्हें अपने लिए अवसर दिखता है तो उसमें कुछ असामान्य भी नहीं है। बेशक अभी तक उत्तर प्रदेश की मौजूदा राजनीति में योगी आदित्यनाथ के लिए कोई चुनौती नजर नहीं आती। लेकिन बीजेपी में ही असम का भी उदाहरण है। तत्कालीन मुख्यमंत्री सवार्नंद सोनोवाल की ही अगुआई में पार्टी की असम में जीत हुई। लेकिन चुनाव बाद उनकी जगह हिमंता बिस्वसर्मा को कमान मिल गई। कुछ राजनीतिक समीक्षक इस संदर्भ में भी केशव प्रसाद मौर्य के ट्वीट को देख रहे हैं। हालांकि यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि 1991 का पूजास्थल कानून अब भी बरकरार है, जो कहता है कि आजादी के समय देश के पूजास्थलों की धार्मिक अवस्थिति थी, उसमें बदलाव नहीं किया जा सकता। अयोध्या के रामजन्मभूमि मंदिर को अपवाद माना गया है। ऐसे में मौर्य के बयान पर स्वाभाविक ही सवाल उठाए जा रहे हैं। कहा जा रहा है कि शासन में जिम्मेदारी के पद पर बैठा व्यक्ति ऐसा बयान कैसे दे सकता है।

वोट बैंक की मजबूरीः यह भी सच है कि राममंदिर आंदोलन के उभार के दिनों से ही संघ परिवार अयोध्या के साथ ही काशी और मथुरा के भी मामलों का जिक्र करता रहा है। इसलिए यह मान लेना कि संघ विचार परिवार की राजनीति इससे इतर हो जाएगी, नादानी ही कही जाएगी। वैसे भी बीजेपी के वोट बैंक का एक बड़ा हिस्सा ऐसा है, जो अक्सरहां उससे इन मुद्दों पर राय जानने की कोशिश करता रहता है। पार्टी को इन मुद्दों के प्रति आग्रही अपने वोटरों के साथ भी रिश्ता रखना है, इसलिए वह मथुरा जैसे मुद्दों को छोड़ नहीं सकती। मथुरा के मुद्दे को उठाने की एक वजह बीजेपी के लिए अपने प्रतिबद्ध वोटरों के रुझान को अभिव्यक्ति देना तो है ही, मौजूदा राजनीति में खुद प्रासंगिक बने रहना भी है। अपने कोर वोटरों को जोड़े रखने के लिए जहां ऐसे कोर मुद्दों पर बीजेपी को बने रहना होगा, वहीं विकास के मुद्दे पर भी आक्रामक राजनीति करनी होगी। केशव प्रसाद मौर्य के हालिया ट्वीट को इन तथ्यों के संदर्भ में समग्रता से देखा जाना चाहिए।

किसानों की तर्ज पर मजदूरों का आंदोलन!

नरेंद्र नाथ

किसान आंदोलन की आंच को अभी कम करने की कोशिश जारी ही थी कि केंद्र सरकार और बीजेपी के लिए नया मोर्चा खुलने का संकेत दिखने लगा है। यह मोर्चा है कर्मचारी और असंगठित मजदूरों का। अलग-अलग मांगों को लेकर देश के अलग-अलग हिस्सों में हाल के दिनों में इनका विरोध प्रदर्शन हुआ है। 28 नवंबर को मुंबई में मजदूर संगठनों ने एक बड़ी रैली की, जिसका किसान संगठनों ने भी समर्थन किया। साथ ही किसान संगठनों ने एलान किया कि वे मजदूरों के पक्ष में भी लड़ाई लड़ेंगे। दो दिन पहले किसान नेता राकेश टिकैत ने ट्वीट कर कहा, ह्यहमने आंदोलन के शुरू में आगाह किया था कि अगला नंबर बैंकों का होगा। नतीजा देखिए, 6 दिसंबर को संसद में सरकारी बैंकों के निजीकरण का बिल पेश होने जा रहा है। निजीकरण के खिलाफ देशभर में साझा आंदोलन की जरूरत हैह्ल। दरअसल निजीकरण के खिलाफ देशभर में तमाम सरकारी बैंकों के कर्मचारी 16 और 17 दिसंबर को देशव्यापी हड़ताल करेंगे। यह ट्वीट उसके समर्थन में था। किसानों ने अपने साल भर के आंदोलन के बाद सरकार से अपनी मांगों को मनवाकर मजदूर संगठनों को भी राह दिखा दी। जबसे सरकार ने तीनों कृषि कानून वापस लिए हैं, तबसे मजदूर संगठन भी आक्रामक दिखने लगे हैं। और अब इनके साथ किसान-मजदूर गठबंधन भी बनने के संकेत हैं। सरकार और बीजेपी के लिए यह गठबंधन सबसे चिंताजनक हो सकता है। जानकारों के अनुसार, बीजेपी को विपक्षी दलों के गठबंधन से अधिक इस गठबंधन की चिंता करनी चाहिए।

दरअसल, कोविड के बाद आर्थिक दिक्कतों के बीच इस तरह की नाराजगी और आंदोलन तमाम देशों में देखे जा रहे हैं। यह तबका भी बहुत बड़ा और निर्णायक माना जाता है, जो सियासत की राहें बदलने की क्षमता रखता है। किसान संगठन अभी भी एमएसपी पर कानून के लिए जमे हुए हैं तो मजदूर संगठनों को सरकार के नए लेबर कोड से दिक्कतें हैं। लेबर कानून भी कोविड की पहली लहर में आर्थिक पैकेज के तहत कृषि कानून की तरह ही केंद्र सरकार ने बनाया था। इसके तहत पहले के 29 लेबर कानूनों को समेटकर और उसमें कुछ महत्वपूर्ण संशोधन कर चार लेबर कोड में बदल दिया गया। श्रम संगठन इन चार में दो लेबर रिफॉर्म से तो सहमत हैं, लेकिन बाकी दो के प्रति उनकी बहुत सारी चिंताएं हैं। नए कानून के तहत मजदूरों के हड़ताल पर जाने को लेकर तमाम तरह की बंदिशें हैं। इसमें एक अहम बदलाव यह भी है कि कई तरह की फैक्ट्रियों को आवश्यक सेवा में डाल दिया गया, जिससे मजदूरों पर कंपनी के प्रबंधकों का अधिक नियंत्रण आ गया है। एक और बड़े बदलाव के तहत यह व्यवस्था की गई है कि जिन कंपनियों में 300 से कम कर्मचारी हैं, उन्हें बंद करने के लिए सरकार से किसी तरह की पूर्व अनुमति नहीं लेनी होगी। पहले यह सीमा 100 कर्मचारियों तक थी। मजदूर संगठनों का कहना है कि इन दो कानूनों की आड़ में न सिर्फ उनके हितों को मारा जाएगा, बल्कि उनकी नौकरी भी हमेशा असुरक्षित रहेगी। दिलचस्प बात है कि आरएसएस समर्थित भारतीय मजदूर संघ भी इस कानून का विरोध कर रहा है। इस संगठन ने भी सरकार से इस रिफॉर्म पर जल्दबाजी में आगे न बढ़ने का अनुरोध किया है। वहीं मजदूर संगठनों ने संकेत दिया है कि वे आने वाले महीनों में अपना देशव्यापी आंदोलन बढ़ाएंगे। विपक्षी दल भी इन्हें समर्थन दे रहे हैं। ऐसे में अगर आम चुनाव से पहले किसान-मजदूर मिलकर आंदोलन का रास्ता पकड़ेंगे तो सरकार को दिक्कत हो सकती है। यही कारण है कि किसान आंदोलन से सीख लेते हुए सरकार समय रहते चीजों को ठीक करने में जुटी है। सूत्रों के अनुसार लेबर रिफॉर्म पर भी अब सरकार आक्रामक रूप से आगे बढ़ने की हड़बड़ी नहीं दिखाएगी। आंदोलनों के सियासत पर पड़ने वाले असर को अगर देखें तो यूपीए सरकार की जड़ें हिलाने का काम करप्शन के विरुद्ध चले अन्ना आंदोलन ने ही किया था। तब कांग्रेस ने इस आंदोलन को कमतर आंकने की गलती थी जिसका खामियाजा उसे भुगतना पड़ा। लेकिन बीजेपी पुरानी गलतियों से सीख लेते हुए उस गलती को दोहराना नहीं चाहेगी। बीजेपी के सामने आंदोलन के कारण यूपीए को हुए नुकसान की मिसाल है तो 2004 में शहरी आबादी और मिडिल क्लास को नाराज करने का परिणाम भी वाजपेयी सरकार की हार के रूप में मौजूद है। तब अप्रत्याशित तरीके से एनडीए को शहरी सीटों पर हार झेलनी पड़ी थी। लेकिन सरकार को पता है कि 2024 का आम चुनाव अभी दूर है और आगे कोर्स करेक्शन के कई मौके मिलेंगे। 2019 में भी आम चुनाव से ठीक पहले किसान हों या मिडिल क्लास, सबकी ऐसी ही नाराजगी की बात सामने आई थी। लेकिन मोदी सरकार ने अपने पहले टर्म के अंतिम बजट में किसान सम्मान निधि का एलान करके और इनकम टैक्स की सीमा पांच लाख रुपये बढ़ाकर इन तबकों का व्यापक समर्थन हासिल किया था। इसके साथ ही मौका आने पर पीएम मोदी चौंकाने वाले फैसले लेने में माहिर हैं। राजनीति के माहिर पीएम मोदी को भी किसान-मजदूर गठबंधन के असर का अंदाजा होगा। इन सबके बीच कांग्रेस को उस तबके में सेंध लगने की उम्मीद दिख रही है जो कुछ सालों में उससे पूरी तरह दूर जा चुका है। कांग्रेस के एक सीनियर नेता ने कहा कि 2024 से पहले किसान और मजदूर का अपनी वाजिब मांगों पर साथ आना देश की राजनीति का एक अहम मोड़ होगा, जो बीजेपी के पतन का कारण बनेगा। लेकिन सबसे बड़ा सवाल है कि जिस तरह अन्ना आंदोलन का बीजेपी ने लाभ उठाया और नरेंद्र मोदी नए नेतृत्व के रूप में उभरे, क्या विपक्ष के पास ऐसी कोई रणनीति होगी? अभी जिस तरह से विपक्षी एकता बेपटरी है और कांग्रेस खुद अंदरूनी राजनीति से घिरी है, ऐसा कुछ करना उसके लिए आसान नहीं लगता। फिर भी, बीजेपी के सामने चिंता की एक लकीर तो खिंच ही रही है।

एफएसपीएः काले कानून से कब मिलेगी नॉर्थ-ईस्ट को आजादी

बिनालक्ष्मी नेप्रम

अंग्रेजों ने तो 200 साल तक राज करने के बाद भारत छोड़ा पर उनके जाने के कुछ ही बाद बाद भारत ने 11 सितंबर, 1958 को पूर्वोत्तर भारत पर सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम (आफ्स्पा) लागू कर दिया। वैसे पहली बार आफ्स्पा 15 अगस्त, 1942 को ब्रिटिश वायसराय लिनलिथगो ने भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 72 के तहत लागू किया था। लिनलिथगो को सबसे अनुदार गवर्नर जनरलों में गिना जाता है। इसे लागू करने का मकसद सशस्त्र बलों के कुछ अधिकारियों को विशेष अधिकार देना था। मणिपुर और नॉर्थ ईस्ट को इस मार्शल लॉ के चलते बलात्कार, गिरफ्तारी और यातना का लंबा सिलसिला भुगतना पड़ा है। अब तक कम से कम 20,000 लोग मारे गए हैं। इस अधिनियम के तहत सशस्त्र बलों को कोई भी अपराध करने की पूरी छूट मिल जाती है। नगालैंड और पूर्वोत्तर के इतिहास में 4 और 5 दिसंबर 2021 काले दिन के रूप में याद किए जाएंगे। नगालैंड के मोन जिले में एक असफल काउंटरइन्सर्जेंसी ऑपरेशन और इसके दुखद परिणाम के रूप में कोन्याक मूलनिवासी समुदाय के 14 लोग मारे गए। इस घटना ने पूरे नॉर्थ ईस्ट को झकझोर कर रख दिया और आफ्स्पा निरस्त करने की मांग फिर से तेज हो गई। केंद्र में सत्तारूढ़ दल की सहयोगी पार्टियों से जुड़े दो मुख्यमंत्रियों ने भी आफ्सपा निरस्त करने की मांग की है। इसके चलते नगालैंड का हॉर्नबिल महोत्सव रुक गया, इंटरनेट बंद करके लॉकडाउन लगा दिया गया। इलाके भर में काले झंडे लहराए गए और भारतीय सेना वापस जाओ के नारे वाले पोस्टर लगाए गए।

यह कोई पहली बार नहीं है जब इस तरह से नागरिकों को मारा गया हो। 1958 से इधर बड़े पैमाने पर हत्याएं हो रही हैं। हममें से बहुतों के घर उन जगहों के आसपास हैं जहां पर ऐसे कांड हुए। मसलन, इम्फाल में हीरांगोइथोंग कांड जहां हुआ था, मैं उसी इलाके में पली-बढ़ी हूं। वहां 1984 में वॉलिबॉल मैच देख रहे 14 नागरिकों को सीआरपीएफ ने गोली मार दी थी। ऐसी अन्य घटनाओं में उल्लेखनीय है मणिपुर का मालोम कांड जिसमें 10 नागरिक मारे गए थे और 1995 का रिम्स कांड जिसमें एक मेडिकल छात्र सहित नौ नागरिक मारे गए थे। पिछले 63 सालों से आफ्स्पा के लागू रहने से सुरक्षा बलों को जैसे हत्या का लाइसेंस मिल गया है। भारत दुनिया का इकलौता देश है जहां बगैर किसी युद्ध के ही एक इमरजेंसी मार्शल लॉ लगा हुआ है। मणिपुर बीजेपी ने 2014 के अपने चुनावी घोषणापत्र में आफ्सपा को खत्म करने की बात कही थी, मगर वह अब चुप है। भले ही नगालैंड और केंद्र सरकार ने जांच की मांग की हो, लेकिन आफ्स्पा भारतीय सुरक्षा बलों द्वारा किए गए हर गलत काम की सुरक्षा करता है। ध्यान रहे कि आफ्स्पा को खत्म करने की मांग सशस्त्र बलों के खिलाफ नहीं है और न ही यह कोई राष्ट्र-विरोधी कार्य है। सशस्त्र बल निहत्थे नागरिकों को मारने के लिए नहीं हैं। वे सीमा सुरक्षा के लिए हैं। आफ्स्पा को निरस्त करने की मांग दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र भारत से लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति सच्चे रहने को कहने का साहस है। अगर कोई विधानसभा ह्यअशांत क्षेत्र अधिनियम के टैग को वापस ले ले तो सेना आफ्स्पा के तहत आकर काम नहीं कर सकती।

दहेज मांगने पर गिरफ्तारी

हरियाणा की एक युवती ने दहेज के विरुद्ध ऐसा जबर्दस्त कदम उठाया है कि उसका अनुकरण पूरे भारत में होना चाहिए। भारत सरकार ने दहेज निषेध कानून बना रखा है लेकिन भारत में इसका पालन इसके उल्लंघन से ही होता है। बहुत कम विवाह देश में ऐसे होते हैं, जिनमें दहेज का लेन-देन न होता हो। जहां स्वेच्छा से दहेज दिया जाता है, वहां भी लड़कीवालों पर तरह-तरह के मानसिक, सामाजिक और जातीय दबाव होते हैं। कई बार फेरों के पहले ही विवाह टूट जाता है, आई हुई बारात खाली लौट जाती है और विवाह-स्थल पर ही घरातियों व बारातियों में दंगल हो जाता है। शादी के बाद तो बहुओं को जिंदगी भर तंग किया जाता है। उनके मां-बाप को कोसा जाता है और बहुएं तंग आकर आत्महत्या कर लेती हैं। दहेज मांगने वालों को 3 से 5 साल की सजा का प्रावधान कानून में है लेकिन भारत में कानून की हालत खुद बड़ी खस्ता है। पहली बात तो यही कि लड़कीवालों की हिम्मत ही नहीं होती कि वे कानून का सहारा लें। यदि वे अदालत में जाएं तो पहले उनके पास वकीलों की फीस भरने के लिए पैसे होने चाहिए और दूसरा खतरा उनकी बेटी को ससुराल से धकियाए जाने का होता है। अदालत में कोई चला भी जाए तो उसे इंसाफ मिलने में बरसों लग जाते हैं। लेकिन हरियाणा के आकोदा गांव की एक युवती ने अत्यंत साहसिक कदम उठाकर दहेज के इस अधमरे कानून में जान फूंक दी है। इस लड़की की शादी 22 नवंबर को होनी थी। दूल्हे ने दहेज में 14 लाख रु. की कार मांगी। कार नहीं मिलने पर वह 22 नवंबर को बारात लेकर आकोदा नहीं पहुंचा। लड़की ने उस भावी पति के खिलाफ पुलिस में रपट लिखवाई और दंड संहिता की धारा 498ए के तहत उसे गिरफ्तार करवा दिया। मुझे खुशी तब होती, जबकि उसके परिवार के कुछ बुजुर्ग सदस्यों को भी जेल की हवा खिलवाई जाती, क्योंकि उनकी सहमति के बिना दहेज में कार की मांग क्यों होती? अब उस बहादुर लड़की के लिए रिश्तों की भरमार हो गई है। इससे पता चलता है कि भारत में आदर्श आचरण करनेवालों की कमी नहीं है। असली दिक्कत तो लालच ही है। लालच में फंसे होने के कारण ही हमारे नेता और अफसर रिश्वत खाते हैं, डॉक्टर और वकील ठगी करते हैं, व्यापारी मिलावट करते हैं और किसी का कुछ बस नहीं चलता है तो लोग दहेज के बहाने अपने बेटे-बेटियों का भी सौदा कर डालते हैं। कई लोग अपनी सुंदर, सुशिक्षित और सुशील बेटियों को अयोग्य पैसे वालों के यहां अटका देते हैं। वे जीवन भर अपने भाग्य को कोसती रहती हैं। इस बीमारी का इलाज सिर्फ कानून से नहीं हो सकता है। इसके लिए भारत में सामाजिक और सांस्कृतिक आंदोलन की सख्त जरूरत है। मैंने लगभग 60 साल पहले इंदौर में ऐसा आंदोलन शुरू किया था। जिन सैकड़ों लड़कों ने मेरे साथ दहेज नहीं लेने की प्रतिज्ञा की थी, उनकी दूसरी-तीसरी पीढ़ी भी आज तक उस संकल्प को निभा रही हैं। यदि भारत के साधु-संत, मौलाना, पंडित-पादरी लोग यह बीड़ा उठा लें और आर्यसमाज, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, सर्वोदय मंडल, साधु समाज, इमाम संघ, शिरोमणि सभा आदि संगठन इस मुद्दे को अपने हाथ में ले लें तो दहेज की समस्या पर काबू पा लेना कठिन नहीं होगा।

-डॉ. वेदप्रताप वैदिक

विराट के सपोर्ट में उतरे 1983 वर्ल्ड कप विजेता टीम के पूर्व ऑलराउंडर, कहा-

कोहली को 2023 वर्ल्ड कप तक कप्तान बने रहना चाहिए था

नई दिल्ली। विराट कोहली को भारतीय क्रिकेट टीम के वनडे और टी20 कप्तानी से हटाए जाने पर चर्चा जारी है। विराट की जगह रोहित शर्मा को व्हाइट बॉल क्रिकेट में वनडे और टी20 का नया कप्तान नियुक्त किया गया है। बीसीसीआई ने बुधवार को दक्षिण अफ्रीका दौरे के लिए टेस्ट टीम का ऐलान करते समय भारत के नए वनडे कप्तान की घोषणा की।

कोहली ने टी20 वर्ल्ड कप 2021 के बाद टी20 टीम की कप्तानी छोड़ दी थी और उन्होंने वनडे तथा टेस्ट टीम का कप्तान बने रहने की इच्छा जाहिर की थी। ऐसा माना जा रहा था कि वह वर्ल्ड कप 2023 तक टीम के वनडे कप्तान बने रह सकते हैं। लेकिन बीसीसीआई और चयनकताओं ने ऐसा नहीं होने दिया। विराट को वनडे कप्तानी से हटाने को लेकर 1983 वर्ल्ड कप विजेता टीम के खिलाड़ी मदन लाल ने बोर्ड की आलोचना की है। भारत के पूर्व ऑलराउंडर और हेड कोच मदन लाल का मानना है कि अगर वनडे मैचों में बतौर कप्तान कोहली का रिकॉर्ड अच्छा था, तो उन्हें कोहली वनडे में अच्छे रिजल्ट दे रहे थे, तो फिर यह बदलाव करने की जरूरत क्यों पड़ी? मैं यह

कप्तानी से हटाए जाने की जरूरत नहीं थी। मदन लाल ने मिड-डे से कहा, 'मैं नहीं जानता कि इसको लेकर सेलेक्टर्स की क्या सोच रही होगी, लेकिन मैं मानता हूं कि जब समझता हूं कि सीमित ओवर्स के फॉर्मेट में बहुत ज्यादा क्रिकेट होने के चलते कोहली ने टी20 की कप्तानी से इस्तीफा दिया होगा। वनडे में अच्छे प्रदर्शन के बावजूद कोहली वनडे में अच्छे रिजल्ट दे रहे थे, तो फिर यह बदलाव करने की जरूरत क्यों पड़ी? मैं यह हटाना सही नहीं रहा। मुझे लगता है कि कोहली को 2023 वर्ल्ड कप तक कप्तान बने रहना चाहिए था। एक टीम को बनाना बहुत मुश्किल का काम होता है, जबकि उसे खत्म करना बेहद आसान।'

हाल ही में बीसीसीआई अध्यक्ष सौरव गांगुली ने कहा था कि वे दो फॉर्मेट (सीमित ओवर्स और टेस्ट) में दो कप्तान रखना नहीं चाहते थे, क्योंकि इससे काफी कन्फ्यूजन की स्थिति हो जाती है। गांगुली के इस बयान पर मदन लाल ने कहा, 'मैं नहीं मानता कि दोनों फॉर्मेट में अलग कप्तान होने से कन्फ्यूजन की स्थिति होती है। हर कप्तान का एक अलग स्टाइल होता है।

ऐसे में कन्फ्यूजन कैसा। विराट और रोहित की कप विराट और रोहित की कप्तानी का अलग अंदाज है, जबकि महेंद्र सिंह धोनी अपने एक अलग ही अंदाज में लीड करते थे।' वनडे में रोहित ने अबतक 10 मैचों में कप्तानी की है, जिसमें से भारत को आठ में जीत मिली है और दो मैचों में हार का सामना करना पड़ा है। रोहित का वनडे में विनिंग प्रतिशत 80.00 का रहा है। वहीं, रोहित ने टी20 इंटरनेशनल में 22 मैचों में भारतीय टीम की कप्तानी की है, जिसमें 18 में जीत मिली और चार में हार।

होबार्ट करेगा पांचवें और आखिरी एशेज टेस्ट की मेजबानी, क्रिकेट ऑस्ट्रेलिया ने लगाई मुहर

नई दिल्ली। कोरोना महामारी के मद्देनजर वेस्ट ऑस्ट्रेलिया में सख्त क्वारंटीन नियमों के कारण पर्थ के क्रिकेट मैच का आयोजन करने में असमर्थ होने के बाद ऑस्ट्रेलिया के द्वीप राज्य तस्मानिया की राजधानी होबार्ट ऑस्ट्रेलिया और इंग्लैंड के बीच पांचवें और अंतिम एशेज टेस्ट मैच की मेजबानी करेगी। समझा जाता है कि विक्टोरिया, न्यू साउथ वेल्स, दक्षिण ऑस्ट्रेलिया और कैनबरा ने मैच की मेजबानी के अधिकार के लिए बोली लगाई थी, लेकिन क्रिकेट ऑस्ट्रेलिया (सीए) ने गुरुवार को अपनी और तस्मानियाई सरकार की एक संयुक्त बोली पर मुहर लगा दी। दरअसल क्रिकेट ऑस्ट्रेलिया ने पांचवें टेस्ट मैच की मेजबानी के अधिकार के लिए टेंडर जारी किया था। वहीं इस हफ्ते की शुरूआत में ऑस्ट्रेलियाई क्रिकेट बोर्ड ने उसके, वेस्ट ऑस्ट्रेलिया सरकार और ऑस्ट्रेलियाई क्रिकेट

बोर्ड के बीच असहमति के बाद अंतिम एशेज टेस्ट के पर्थ से स्थानांतरण की पुष्टि की थी।

अमेरिकी न्यूज चैनल एबीसी की रिपोर्ट के मुताबिक समझौता पूरा हो गया है और इस सप्ताहांत तक इस बारे में आधिकारिक घोषणा हो जाएगी। होबार्ट का बेलेरिव ओवल, जिसमें लगभग 20 हजार दर्शकों के बैठने की क्षमता है, अपने पहले एशेज टेस्ट मैच की मेजबानी करेगा। 2016 के बाद से यहां यह पहला टेस्ट मैच होगा। इंग्लैंड और ऑस्ट्रेलिया के बीच पांचवां और आखिरी एशेज टेस्ट मैच पांच से नौ जनवरी 2022 तक खेला जाएगा।

वीवीएस लक्ष्मण के बाद अब इस पूर्व भारतीय क्रिकेटर ने की मयंक अग्रवाल की तारीफ

नई दिल्ली। भारतीय क्रिकेट टीम के पूर्व बल्लेबाजी कोच संजय बांगर ने भारत और न्यूजीलैंड के बीच हाल ही में समाप्त हुए दूसरे टेस्ट मैच में सलामी बल्लेबाज मयंक अग्रवाल के प्रदर्शन की जमकर तारीफ करते हुए कहा है कि मयंक ने जिस तरह से टेस्ट क्रिकेट में वापसी की है, वह बड़ी उपलब्धि है। रोहित शर्मा और केएल राहुल की अनुपस्थिति में सीरीज में खेल रहे सलामी बल्लेबाज अग्रवाल कानपुर में अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाए थे, लेकिन दूसरे मैच में उन्होंने 150 और 62 रन की शानदार पारियां खेली जिसके लिए उन्हें मैच का बेस्ट खिलाड़ी चुना गया। बांगर ने शुक्रवार को स्टार स्पोर्ट्स के कार्यक्रम 'फॉलो ब्लूज' पर बातचीत के दौरान कहा, 'मयंक की बल्लेबाजी शैली काबिले तारीफ थी। उन्होंने बहुत ही कुशलता से वानखेड़े की पिच का मुकाबला किया जिसमें काफी टर्न और उछाल था। जिस तरह से उन्होंने टिम साउदी का सामना किया, वह मैच का मुख्य आकर्षण था, क्योंकि साउदी ऐसे शख्स थे जिन्होंने पहले टेस्ट मैच में टीम को बहुत परेशान किया था।

रोहित शर्मा ने दक्षिण अफ्रीका दौरे के लिए शुरू की अपनी तैयारी, पेस और उछाल गेंदों पर की प्रैक्टिस

नई दिल्ली। भारतीय क्रिकेट टीम के नए टेस्ट उपकप्तान रोहित शर्मा ने दक्षिण अफ्रीका दौरे पर रवाना होने से पहले अपनी तैयारियां तेज कर दी है। न्यूजीलैंड के खिलाफ दो मैचों की टेस्ट सीरीज से आराम करने के बाद रोहित का ध्यान अब दक्षिण अफ्रीका दौरे से पहले लय में लौटने पर लगी हुई है।टीम इंडिया को 26 दिसंबर से दक्षिण अफ्रीका दौरे पर तीन मैचों की टेस्ट सीरीज खेलनी है। रोहित ने शुक्रवार को अपने इंस्टाग्राम अकाउंट पर एक वीडियो पोस्ट किया है, जिसमें वह बल्लेबाजी प्रैक्टिस करते हुए दिखाई दे रहे हैं। प्रैक्टिस के दौरान वह उछाल लेती गेंदों का सामना करते हुए नजर आ रहे हैं क्योंकि दक्षिण अफ्रीका में तेज गेंदबाजों को पिच से काफी उछाल मिलती है और गेंद हल्का स्विंग भी होती हैं। ऐसे में रोहित भी दक्षिण अफ्रीका में मिलने वाली परिस्थितियों के हिसाब से अपनी ट्रेनिंग और प्रैक्टिस कर रहे हैं। भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड (बीसीसीआई) ने बुधवार को ही रोहित को टेस्ट टीम का नया उपकप्तान बनाया है। साथ ही उन्हें वनडे टीम की भी कप्तानी सौंपी गई है। बीसीसीआई ने दक्षिण

दक्षिण अफ्रीका में टेस्ट सीरीज के लिए भारतीय टीमः

विराट कोहली (कप्तान), रोहित शर्मा (उपकप्तान), केएल राहुल, मयंक अग्रवाल, चेतेश्वर पुजारा, अजिंक्य रहाणे, श्रेयस अय्यर, हनुमा विहारी, ऋषभ पंत (विकेटकीपर), ऋद्धिमान साहा (विकेटकीपर), रविचंद्रन अश्विन, जयंत यादव, ईशांत शर्मा, मोहम्मद शमी, उमेश यादव, जसप्रीत बुमराह, शार्दूल ठाकुर, मोहम्मद सिराज।

अफ्रीका दौरे के लिए 18 सदस्यीय भारतीय टीम का चयन किया है, जिसमें रोहित को टेस्ट टीम का नया उपकप्तान बनाया गया है। वह अजिंक्य रहाणे की जगह लेंगे। साथ ही अजिंक्य रहाणे और चेतेश्वर पुजारा को भी टेस्ट टीम में जगह मिली है जबकि जसप्रीत बुमराह और मोहम्मद शमी की टीम में वापसी हुई है।

पूर्व फील्डिंग कोच आर श्रीधर ने 7 साल के कार्यकाल को याद कर कहा-

'क्रिकेट में बुरे दिन से कोचिंग को बेहतर बनाने का मौका मिलता है'

नई दिल्ली। पूर्व फील्डिंग कोच आर श्रीधर ने भारतीय ड्रेसिंग रूम में बिताए सात वर्षों को 'अपने जीवन के सर्वश्रेष्ठ पल' करार देते हुए कहा कि कोचिंग के दौरान टीम का 'बुरा प्रदर्शन' वास्तव में 'कोचिंग के लिए अद्भुत अवसर' होता है। श्रीधर रवि शास्त्री की अध्यक्षता वाली भारतीय टीम के कोचिंग स्टाफ का एक अभिन्न हिस्सा थे। टीम के फील्डिंग लेवल को सुधार करने में अहम भूमिका निभाने वाले कोच ने समाचार एजेंसी 'पीटीआई-भाषा' से बातचीत में एडिलेड (ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ 36 रन पर ऑलआउट) और लीड्स (78 रन पर ऑल आउट) में खराब प्रदर्शन के बारे में कहा, 'यह सीखने का शानदार मौका था। कोच के रूप में मेरे लिए खराब दिन कोचिंग का शानदार अवसर होता है।'

उन्होंने कहा, 'कोचिंग के अवसर से मेरा मतलब खिलाड़ियों

को समझने, उनके साथ अच्छे संबंध बनाने, आवश्यकता पड़ने पर उन्हें तकनीकी और मानसिक रूप से प्रशिक्षित करने का अवसर देने के बारे में है। इससे आपको खिलाड़ी और टीम के बारे में पता चलता है। मूल रूप से बुरे दिनों का आपका बर्ताव आपके व्यक्तित्व को बताता है। श्रीधर से जब पूछा गया कि क्या उनके तत्कालीन मुख्य कोच रवि शास्त्री और गेंदबाजी कोच भरत अरुण से मतभेद होते थे तो उन्होंने कहा कि सर्वश्रेष्ठ नतीजे या फैसले के लिए मतभेद होना जरूरी है। सात साल तक भारतीय टीम के फील्डिंग कोच रहे इस खिलाड़ी ने कहा, 'मेरा मानना है कि बेस्ट निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए सभी कोच के बीच मतभेद होना जरूरी है। हमारे बीच हमेशा मतभेद होते थे चाहे वह मैं, रवि भाई (शास्त्री), भरत सर, हो या पहले संजय (बांगर) और फिर बाद में विक्रम (राठौड़)। लेकिन हम सभी एक ही लक्ष्य को हासिल करने के लिए काम कर रहे थे। इसमें कई बार दो लोग सहमत होते है, कई बार ऐसा नहीं होता है।। हम मुद्दे के अलग-अलग दृष्टिकोण पर बातचीत के बाद वही निर्णय लेते हैं जो भारतीय क्रिकेट के लिए सबसे उपयुक्त है। हमें ऐसा कभी नहीं लगा कि हमारे विचारों को खारिज कर दिया गया है। उन्होंने मुख्य कोच शास्त्री की तारीफ करते हुए कहा, 'रवि भाई (शास्त्री) को आप कभी भी खेल से जुड़े सुझाव दे सकते है और वह उसे खारिज नहीं करेंगे। उनमें नेतृत्व गुण और मानव प्रबंधन का शानदार कौशल है। उनमें टीम के हित में बोर्ड से कोई भी फैसला करवा लेने की क्षमता है। उनका कद बहुत बड़ा था और वह खिलाड़ियों की मानसिकता अच्छे से समझते थे।

जो रूट ने टेस्ट क्रिकेट में रचा इतिहास

माइकल वॉन को पीछे छोड़ा, अब वर्ल्ड रिकॉर्ड बनाने का मौका

नई दिल्ली। मेजबान ऑस्ट्रेलिया और इंग्लैंड के बीच पांच मैचों की एशेज सीरीज का पहला टेस्ट मैच ब्रिसबेन के गाबा मैदान पर खेला जा रहा है। मैच के तीसरे दिन इंग्लैंड के कप्तान जो रूट ने एक बड़ा रिकॉर्ड अपने नाम कर लिया है। रूट ने इंग्लैंड की ओर से एक कैलेंडर ईयर में सर्वाधिक रन बनाने का नया रिकार्ड बनाया है। वह 2021 में अभी तक 1541 रन बना चुके हैं और इस मामले में उन्होंने हमवतन माइकल वॉन के 2002 में बनाए गए 1481 रन के रिकार्ड को पीछे छोड़ दिया है। रूट ने इससे पहले, 2016 में 1477 और 2015 में 1385 रन बनाए थे।

एक कैलेंडर ईयर में 1500 या उससे ज्यादा रन बनाने वालों की लिस्ट में रूट दुनिया के नौवें क्रिकेटर बन गए हैं। इस लिस्ट में भारत के दो दिग्गज भी शामिल हैं, जिनमें सचिन तेंदुलकर और सुनील गावस्कर हैं। सचिन एक कैलेंडर ईयर में सबसे ज्यादा 1562 रन बनाने वाले पहले भारतीय हैं। सचिन ने यह रिकॉर्ड 2010 में बनाया था। उनके बाद गावस्कर हैं, जिन्होंने 1979 में 1555 रन बनाए थे।

एक कैलेंडर ईयर में सबसे ज्यादा रन बनाने का रिकॉर्ड पाकिस्तान के पूर्व बल्लेबाज मोहम्मद यूसुफ के नाम हैं, जिन्होंने 2006 में 11 मैचों में 1788 रन बनाए थे। रूट के निशाने पर अब मोहम्मद यूसुफ का वर्ल्ड रिकॉर्ड है। एक कैलेंडर ईयर में सबसे ज्यादा रन बनाने वाले बल्लेबाजों की लिस्ट में वेस्टइंडीज के विवियन रिचर्ड्स दूसरे नंबर पर हैं, जिन्होंने 1976 के कैलेंडर ईयर में 1710 रन जड़े थे। ब्रिसबेन के गाबा मैदान पर खेले जा रहे इस टेस्ट मैच के तीसरे दिन का खेल खत्म होने तक इंग्लैंड ने दूसरी पारी में दो विकेट पर 220 रन बना लिए हैं। डेविड मलान 80 और रूट 86 रन बनाकर नॉटआउट लौटे हैं। दोनों अभी तक तीसरे विकेट के लिए 159 रनों की साझेदारी निभा चुके हैं। इससे पहले ट्रैविस हेड ने 148 गेंदों पर 152 रन की पारी खेली, जिससे ऑस्ट्रेलिया ने अपनी पहली पारी में 425 रन बनाकर 278 रन की बढ़त हासिल की।

विराट कोहली को कप्तानी से हटाने पर पूर्व चीफ सिलेक्टर ने दिया बड़ा बयान, कहा-

खिलाड़ियों को समंदर में नहीं फेंक सकते

नई दिल्ली (एजेंसी)। विराट कोहली की जगह रोहित शर्मा को भारतीय टीम के नए वनडे कप्तान बनाए जाने के बीसीसीआई के फैसले को करीब 48 घंटे हो चुके हैं। लेकिन इस पर अभी भी बहस जारी है। व्हाइट बॉल क्रिकेट में विराट को कप्तानी से हटाने और रोहित को नया कप्तान बनाने पर क्रिकेट समुदाय से मिली-जुली प्रतिक्रियाएं सामने आ रही है। कुछ लोगों का मानना है कि कोहली अबतक आईसीसी खिताब नहीं जीत पाए हैं, इसलिए उन्हें कप्तानी से हटाया गया है जबकि कुछ लोगों का मानना है कि कोहली को 2023 में होने वाले 50 ओवरों के विश्व कप तक बने रहना चाहिए था। इस बीच, पूर्व चयनकर्ता प्रमुख दिलीप वेंगसरकर का मानना है कि कोहली को वनडे कप्तानी से हटाने से उन्हें ही इसका फायदा होगा।

एक बातचीत में वेंगसरकर ने कहा, 'रोहित शर्मा को वनडे और टी20 इंटरनेशनल में भारत के नए कप्तान बनाने का बीसीसीआई का फैसला सही कदम है। रोहित पिछले कुछ समय से अच्छा कर रहे हैं और वह अपनी कप्तानी की बारी का इंतजार कर रहे थे। मुझे लगता है कि यह एक अच्छा कदम है। अब, विराट कोहली टेस्ट क्रिकेट पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं और रोहित व्हाइट बॉल पर, जिसमें उन्होंने अब तक एक कप्तान के रूप में असाधारण प्रदर्शन किया है। उन्होंने आईपीएल में मुंबई इंडियंस के लिए कई खिताब जीते हैं और भारतीय टीम के कप्तान के रूप में उन्हें जो भी दिया गया है, उसमें भी उन्होंने अच्छा प्रदर्शन किया है।

उन्होंने आगे कहा, 'जब मैं

सेलेक्शन कमेटी का प्रमुख था तो मैंने अनिल कुंबले को कप्तान बनाया और उसी समय धोनी और दूसरे खिलाड़ियों को तैयार किया। मैंने ईशांत शर्मा को तैयार किया जिन्हें मैं इंग्लैंड दौरे पर ले गया। मैं जानता था कि ईशांत को वहां मौका नहीं मिलेगा लेकिन मुझे ये पता था कि ऑस्ट्रेलिया दौरे पर वो अच्छा प्रदर्शन कर सकता है। सेलेक्टरों का काम ही है खिलाड़ियों को तैयार करना। आप किसी खिलाड़ी को समंदर में फेंककर उनके तैरने की उम्मीद नहीं कर सकते।

मयंक अग्रवाल के खेल के मुरीद हुए वीवीएस लक्ष्मण, कहा- सलामी बल्लेबाज ने अपने आत्मविश्वास के दम पर वापसी की

नई दिल्ली। भारत के पूर्व बल्लेबाज और जल्द ही नेशनल क्रिकेट अकादमी के प्रमुख का पद संभालने वाले वीवीएस लक्ष्मण का मानना है कि मयंक अग्रवाल के न्यूजीलैंड के खिलाफ दूसरे टेस्ट मैच में शानदार प्रदर्शन से उनके आत्मविश्वास का पता चलता है। रोहित शर्मा और केएल राहुल की अनुपस्थिति में सीरीज में खेल रहे सलामी बल्लेबाज अग्रवाल कानपुर में अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाए थे, लेकिन दूसरे मैच में उन्होंने 150 और 62 रन की शानदार पारियां खेली जिसके लिए उन्हें मैच का बेस्ट खिलाड़ी चुना गया। लक्ष्मण ने स्टार स्पोर्ट्स के एक कार्यक्रम में कहा, 'उन्होंने अपने आत्मविश्वास को बहुत अधिक महत्व दिया। उन्हें फॉर्म में वापसी करके इस तरह का प्रदर्शन करते हुए देखकर अच्छा लगा। मुझे लगता है कि वह उसी मानसिकता के साथ खेले जैसे कि वह फर्स्ट क्लास और इंटरनेशनल क्रिकेट में खेलते हैं। उन्होंने विशेषकर एजाज पटेल के खिलाफ कुछ बेजोड़ शॉट खेले।

जिले के 177 स्कूलों के भवन जर्जर

अखंड भारत संदेश

भदोही। शिक्षा विभाग के नए सर्वे में 177 और भवन जर्जर घोषित हो चुके हैं। तीन साल में 378 भवन निष्प्रयोज्य हुए हैं, लेकिन अब तक उन भवनों को ध्वस्त नहीं किया गया है। इनमें से 50 से अधिक भवन कब धराशायी हो जाएंगे, कुछ कहा नहीं जा सकता। शिक्षकों से लेकर अभिभावकों तक को बच्चों की सुरक्षा का भय सताता रहता है। जिले में 892 प्राथमिक, पूर्व माध्यमिक और कंपोजिट विद्यालय संचालित हैं। इसमें एक लाख 83 हजार पहली से आठवीं तक के बच्चे पंजीकृत हैं। मिशन कायाकल्प के तहत अब तक लगभग 300 स्कूलों की तस्वीर बदली जा रही है। उक्त स्कूलों में तमाम सुविधाएं कान्वेंट से बेहतर हो रही हैं, लेकिन 150 प्राथमिक, पूर्व माध्यमिक विद्यालयों के 378 भवन जर्जर घोषित हैं। जिसमें 177 भवन अप्रैल 2021 में जर्जर घोषित हुए। इनकी छतें, दीवारें, फर्श, खिड़की, दरवाजे सब कुछ जर्जर हो गए हैं। कोरोना के कारण स्कूल भले ही बंद चल रहे हैं, लेकिन आने वाले समय में जब भी स्कूल खुलेंगे तो नौनिहालों की परेशानी बढ़ेगी। बारिश के दौरान इन भवनों की छतों से पानी टपकता है। जिला बेसिक शिक्षा अधिकारी भूपेंद्र नारायण सिंह ने कहा कि चिह्नित भवनों में कक्षाएं नहीं चलाई जाती हैं।

विदेश से आए 28 और लोगों की आरटीपीसीआर रिपोर्ट निगेटिव

अखंड भारत संदेश

भदोही। नए वैरिएंट ओमिक्रॉन को लेकर स्वास्थ्य विभाग सतर्क है। अब तक विदेशों से होकर आए 136 लोगों में से 71 लोगों से संपर्क किया गया है। जिसमें से अब तक 50 लोगों का स्वैब लेकर जांच के लिए वाराणसी भेजा गया गया था। इनमें से सभी लोगों की आरटीपीसीआर रिपोर्ट निगेटिव आई है। स्वास्थ्य विभाग के अनुसार पहले 22 लोगों की रिपोर्ट आई थी और अब 28 की रिपोर्ट भी निगेटिव आई है।

कोरोना संक्रमण की पहली और दूसरी लहर सामान्य होने के बाद नए वैरिएंट ओमिक्रॉन को लेकर खतरा बढ़ गया है। जिले विदेशों में गए 136 लोगों की घर वापसी होने पर स्वास्थ्य विभाग सभी के जांच में जुट गई। उपमुख्य चिकित्सा अधिकारी डॉ. अमित दुबे ने बताया है कि बृहस्पतिवार को बाहर के देशों से आने वाले सात लोगों की लिस्ट मिला है।

अब तक कुल 136 लोग आ चुके हैं। जिसमें से 71 लोगों से संपर्क किया गया है। इसमें 50 लोगों को स्वैब जांच के लिए वाराणसी भेजा गया। इसमें सभी की रिपोट निगेटिव आई है। बाकी लोगों संपर्क कर जांच के लिए सैंपलिंग की जा रही है।

मेघालय में कांग्रेस को टीएमसी ने फिर पहुंचाई चोट, काउंसिल के 11 सदस्यों को किया शामिल

शून्य पर आई सबसे पुरानी पार्टी

नई दिल्ली। पूर्वोत्तर राज्य मेघालय में टीएमसी ने कांग्रेस को नया झटका दिया है। नॉर्थ गारो हिल्स जिले की ट्राइबिल काउंसिल के 11 कांग्रेस सदस्यों ने तृणमूल कांग्रेस का दामन थाम लिया है। इसके साथ ही कांग्रेस की बजाय अब टीएमसी इस काउंसिल में मुख्य विपक्षी दल के तौर पर उभरी है। यही नहीं कांग्रेस के कुल 11 ही मेंबर थे और उसके सभी सदस्यों के टीएमसी में जाने के बाद वह शून्य पर आ गई है। यह कांग्रेस के लिए इस जिले की राजनीति में बड़ा झटका है। इस काउंसिल में बीजेपी और उसकी सहयोगी एनपीपी के कुल 19 सदस्य हैं। इनमें से भाजपा के पास कुल 2 ही मेंबर हैं। मेघालय को तीन स्वायत्त आदिवासी विकास परिषदों बांटकर देखा जाता रहा है। ये हैं खासी, जयंतिया और गारो स्वायत्त परिषद। कांग्रेस के सदस्यों को पार्टी में शामिल कराने के बाद टीएमसी की स्टेट यूनिट ने ट्विटर पर लिखा, 'हमारे लिए यह बेहद खास दिन है क्योंकि 11 सदस्यों ने हमारे परिवार को जॉइन किया है। हम सभी का गर्मजोशी के साथ स्वागत करते हैं।' हाल ही में टीएमसी में जाने वाले पूर्व सीएम मुकुल संगमा ने भी इनका स्वागत किया है। टीएमसी ने लिखा, 'ममता बनर्जी की लीडरशिप में हम प्रदेश के विकास को नई ऊंचाइयों पर ले जाने का काम करेंगे।

नॉर्थ गारो हिल्स जिले में कांग्रेस में यह फूट कुल 17 में से 12 विधायकों के पार्टी छोड़ने के दो सप्ताह बाद ही हुई है। मुकुल संगमा समेत 12 विधायकों के टीएमसी में जाने से कांग्रेस पहले ही राज्य में बड़े झटके का सामना कर रही थी। बता दें कि बंगाल में एक बार फिर से सत्ता में वापसी के बाद से ही तृणमूल कांग्रेस देश के कई राज्यों में विस्तार करने के प्रयास में है। इन कोशिशों के चलते सबसे ज्यादा नुकसान कांग्रेस को उठाना पड़ा है। गोवा, बिहार, हरियाणा, यूपी समेत कई राज्यों में टीएमसी ने कांग्रेस के नेताओं को तोड़ा है और अपनी पार्टी में शामिल कराया है।

ममता को हमने सपोर्ट कर केंद्रीय मंत्री बनाया और वो गोवा में बीजेपी की मदद कर रही हैं, बोले कांग्रेस सांसद

नई दिल्ली। कांग्रेस नेता अधीर रंजन चौधरी ने आरोप लगाया है कि गोवा में ममता बनर्जी अप्रत्यक्ष तौर से भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) को मदद कर रही हैं। अधीर रंजन चौधरी ने कहा कि खुद को नया विपक्षी पार्टी बता कर तृणमूल कांग्रेस गोवा में बीजेपी को सपोर्ट कर रही है। कांग्रेस सांसद ने कहा, 'ममता बनर्जी गोवा में बीजेपी के लिए रास्ता बना रही हैं। वो अप्रत्यक्ष तौर से बीजेपी को सपोर्ट कर रही हैं। बीजेपी को इस फेडरल फ्रंट के बनने से फायदा होगा। वो यह सोचती हैं कि गोवा में कांग्रेस प्रदर्शन नहीं कर पाएगी..लेकिन वो भूल गई हैं कि कांग्रेस ने उन्हें केंद्रीय मंत्री बनने में मदद की थी।

अधीर रंजन चौधरी का यह बयान पार्टी के वरिष्ठ नेता और पूर्व केंद्रीय मंत्री पी चिदंबरम के उस बयान के एक दिन बाद आया है जिसमें पी चिदंबरम ने भाजपा के खिलाफ संगठित विपक्ष की वकालत की थी। चिदंबरम ने कहा था, ममता बनर्जी का अप्रोच अलग है और हमारा अप्रोच अलग है। देश के लिए अच्छा होगा अगर यह दोनों अप्रोच मिल जाएं।

बर्दाश्त नहीं करेंगे, खुले में नमाज को लेकर बोले हरियाणा के सीएम मनोहर लाल खट्टर

गुरुग्राम। गुरुग्राम में खुले स्थानों पर जुमे की नमाज अदा करने पर कई हिंदू संगठनों द्वारा आपत्ति जताए जाने के बीच हरियाणा के मुख्यमंत्री मनोहर लाल खट्टर ने कहा कि खुले में नमाज पढ़ने की प्रथा को "बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। खट्टर ने यह भी कहा कि जिला प्रशासन के खुले स्थानों पर नमाज के लिए कुछ स्थानों को आरक्षित करने का फैसले को वापस ले लिया गया है और राज्य सरकार अब इस मुद्दे का सौहार्दपूर्ण समाधान निकालेगी। मुख्यमंत्री ने गुरुग्राम में खुले स्थानों पर नमाज अदा करने पर कई दक्षिणपंथी संगठनों द्वारा उठाई गई आपत्तियों को लेकर एक सवाल के जवाब में गुरुग्राम में संवाददाताओं से कहा, "यहां (गुरुग्राम) खुले में नमाज पढ़ने की प्रथा बर्दाश्त नहीं की जाएगी...लेकिन हम सौहार्दपूर्ण समाधान निकालेंगे।

खट्टर ने कहा, "सभी को (प्रार्थना करने के लिए) सुविधा मिलनी चाहिए लेकिन किसी को भी दूसरों के अधिकारों का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। इसकी अनुमति नहीं दी जाएगी।" खुले स्थानों पर नमाज के लिए कुछ स्थान निर्धारित करने के जिला प्रशासन के फैसले को वापस लेने पर उन्होंने कहा, "हमने पुलिस और उपायुक्त से कहा है कि इस मुद्दे को सुलझाया जाए...अगर कोई नमाज अदा करता है, किसी के स्थान पर पाठ करता है तो हम उस पर कोई आपत्ति नहीं है।

मुख्यमंत्री ने कहा, "धार्मिक स्थल इसी मकसद से बनाए जाते हैं कि लोग वहां जाएं और पूजा-अर्चना करें। इस तरह के कार्यक्रम खुले में नहीं होने चाहिए।" खट्टर ने कहा, "खुली जगहों पर नमाज पढ़कर टकराव से बचना चाहिए। हम (दो पक्षों के बीच) टकराव की भी इजाजत नहीं देंगे।" पिछले कुछ महीनों में, कुछ हिंदू संगठनों के सदस्य उन जगहों पर इकट्ठा हो जाते हैं जहां मुस्लिम समुदाय के लोग खुले स्थान पर नमाज अदा करते हैं और "भारत माता की जय" और "जय श्री राम" के नारे लगाते हैं।

धमाकों से दहला भागलपुर का नवगछिया, एक के बाद एक 21 सिलेंडर में विस्फोट

भागलपुर। भागलपुर का नवगछिया बाजार शुक्रवार को गैस सिलेंडरों के धमाके से दहल उठा। एक के बाद एक 21 सिलेंडरों में विस्फोट से काफी दूर तक के इलाके में दहशत फैल गई। आग की लपटों में काफी सामान जलकर राख हो गया और पूरे इलाके में अफरातफरी मच गई। आसपास के लोग घर छोड़कर भाग खड़े हुए। पुलिस प्रशासन की टीम और फायर ब्रिगेड को मौके पर बुलाया गया है। आग को काबू में करने का प्रयास शुरू हुआ। फिलहाल आग का कारण पता नहीं चल सका है। धमाके के पीछे अवैध सिलेंडर रिफिलिंग को कारण बताया जा रहा है। घटना में बगल के घरों में भी आग लग गई। फायर ब्रिगेड की चार गाड़ियों की मदद से आग पर काबू पाया गया। मौके से पुलिस ने 63 सिलेंडर को जब्त कर लिया है। मकान मालिक परिवार सहित घर छोड़कर फरार हो गया है। एसडीओ यतेंद्र कुमार पाल ने बताया कि मकान मालिक पर प्राथमिकी दर्ज कर उसे गिरफ्तार किया जाएगा। पुलिस इस बात की जांच कर रही है कि उसके पास बिना किसी लाइसेंस इतने सिलेंडर कैसे थे।

ओमिक्रॉन प्रभावित देशों से 158 लोग कानपुर आए, अब सैम्पलिंग पर फोकस

कानपुर। ओमिक्रॉन प्रभावित देशों (रेड जोन देशों) से कानपुर ों लोगों को आना लगातार जारी है। तीन दिन में शहर आए 581 और लोगों की सूची केन्द्र सरकार ने स्वास्थ्य विभाग को भेजी है। अब तक विदेश से शहर आए 773 लोगों में 158 ओमिक्रॉन से प्रभावित देशों से आए हैं। अब कांटैक्ट ट्रेसिंग को लेकर स्वास्थ्य विभाग की हवाइयां उड़ गई हैं। अभी तक सिर्फ 117 लोगों के ही कोरोना जांच और जीनोम सिक्वेंसिंग के लिए सैम्पल लिए जा सके हैं।

शहर में ब्रिटेन, इटली, ग्रीस, जर्मनी, दक्षिण अफ्रीका, अमेरिका, बोत्सवाना समेत डेढ़ दर्जन देशों से पौने आठ सौ लोग आए हैं। ये सभी आर्यनगर, स्वरूप नगर, तिलक नगर, किदवई नगर, गोविन्द नगर, सिविल लाइंस, जाजमऊ, चकेरी कल्याणपुर, काकादेव और आईआईटी में हैं। इनमें कुछ लोगों की कांटैक्ट ट्रेसिंग में दिक्कत हो रही है क्योंकि उनका मोबाइल नंबर विदेश का है। सभी के सैम्पलों के साथ ही ट्रैवल हिस्ट्री बनाने के निर्देश जारी किए गए हैं।

हालांकि स्वास्थ्य विभाग ने सभी को सुझाव दिया है कि वे खुद सम्पर्क कर अपना ब्योरा दर्ज कराएं और सैम्पल भी दें। सीएमओ डॉ. नेपाल सिंह का कहना है कि रोज सूची मिल रही है। ऐसे में कांटैक्ट ट्रेसिंग में समय लगेगा। विदेश से आए लोग खुद ही पहल कर आगे आएंगे तो विभाग को रिपोर्ट बनाने के साथ जल्द शंका समाधान करने में आसानी होगी।

जौनपुर में लेखाकार की पत्नी की गैंगरेप के बाद हत्या, रेलवे ट्रैक के किनारे मिली अर्धनग्न लाश

जौनपुर। जौनपुर में एक बार फिर सनसनीखेज वारदात को अंजाम दिया गया है। सहायक लेखाकार की पत्नी की बदमाशों ने हत्या कर दी है। लाइन बाजार थाना क्षेत्र के जगदीशपुर रेलवे क्रासिंग के पास शुक्रवार की सुबह अर्धनग्न लाश मिलने से सनसनी फैल गयी। महिला के सिर पर बड़े पत्थर से वार किया गया था। जीभ बाहर निकली थी। इसे देख लग रहा था कि गला भी दबाया गया है। शरीर पर मौजूद कपड़े पूरी तरह से फटे हुए थे। ऐसे में गैंगरेप के बाद हत्या की आशंका जतायी जा रही है। जानकारी होते ही सैकड़ों की संख्या में लोगों ने जौनपुर वाराणसी मार्ग पर मतापुर के पास चक्काजाम कर दिया। डेढ़ घंटे चले चक्काजाम के दौरान लोग हत्यारों को गिरफ्तार करने की मांग करते रहे। अपर पुलिस अधीक्षक नगर डा. संजय कुमार ने भरोसा दिया कि 24 घंटे के भीतर आरोपियों को गिरफ्तार कर लिया जाएगा। तब लोगों ने लाश पुलिस को कब्जे में लेने दिया। जानकारी के अनुसार लाइनबाजार थाना क्षेत्र के एक गांव निवासी सहायक लेखाकार की पत्नी गुरुवार की देर शाम शौच के लिए घर से खेत की तरफ गयी थी।

बढ़ती महंगाई के बीच एक और बुरी खबर

अगले साल से अस्पतालों में इलाज करवाना हो सकता है महंगा

नई दिल्ली। देश में बढ़ती महंगाई के बीच एक और बुरी खबर है। पेट्रोल-डीजल, एलपीजी सिलेंडर से लेकर खाने-पीने की चीजों के बढ़ते दाम के बीच अब इलाज कराना भी महंगा हो सकता है। प्राइवेट अस्पताल इलाज के खर्चों में वृद्धि करने के मूड में हैं। मीडिया रिपोर्ट की मानें तो अगले साल से चिकित्सा उपचार यानी मेडिकल ट्रीटमेंट और अधिक महंगा हो सकता है क्योंकि अपोलो और फोर्टिस सहित प्रमुख प्राइवेट हॉस्पिटल्स बढ़ती लागत के बीच ट्रीटमेंट पैकेज दरों को 5-10% तक बढ़ाने पर विचार कर रहे हैं। यहां ध्यान देने वाली बात है कि ये अस्पताल नकद भुगतान करने वाले मरीजों के लिए कीमत बढ़ाने पर विचार कर रहे हैं। कुछ निजी अस्पतालों के अधिकारियों ने इंग्लिश वेबसाइट ईटी को बताया कि पैकेज दरों का संशोधन 2021-22 के अंत तक होने की संभावना है। फोर्टिस हेल्थकेयर के प्रवक्ता ने कहा कि हम महत्वपूर्ण ओवरहेड्स (किसी कंपनी के बंधे खर्चे (लाइट, रेंट आदि पर होने वाले नियमित ०?यय) के साथ एक बड़ी मल्टीस्पेशलिटी हॉस्पिटल चेन हैं। हम 2019 के बाद कोरोना की वजह से बढ़ते मैनपावर लागत और अन्य परिचालन लागतों से प्रभावित होने के बावजूद समान दरों पर मरीजों का इलाज कर रहे हैं। हम स्थिति का मूल्यांकन कर रहे हैं और उचित समय पर पैकेज टैरिफ सुधार के बारे में निर्णय लेंगे। अपोलो हॉस्पिटल्स ने यह भी कहा कि वह कीमतें बढ़ाने के विकल्प का मूल्यांकन कर रहा है। अपोलो हॉस्पिटल्स के समूह मुख्य वित्तीय अधिकारी कृष्णन अखिलेश्वरन ने कहा कि स्वच्छता, उपभोग्य सामग्रियों, मानव संसाधन और सामान्य मुद्रास्फीति की लागत हमारे मार्जिन को खा रही है, इसलिए किसी बिंदु पर हमें लागत को पार करना होगा और ट्रीटमेंट रेट को बढ़ाना होगा। कृष्णन ने कहा कि 5% की औसत वार्षिक वृद्धि आम तौर पर आदर्श है, मगर इस बार यह थोड़ी अधिक हो सकती है। अस्पतालों का कॉस्ट बढ़ गया है। अधिकारियों ने कहा कि अपोलो और फोर्टिस दोनों अभी भी पूर्व-महामारी के स्तर तक पूर्ण बिजनेस रिकवरी से 5-6% दूर हैं।

एनसीबी दफ्तर में हाजिरी से परेशान हुए आर्यन खान, ल्ठउ से की जमानत की शर्त बदलने की मांग, दी यह दलील

मुंबई। बॉलीवुड अभिनेता शाहरुख खान के बेटे आर्यन खान ने शुक्रवार को बंबई उच्च न्यायालय का रुख कर क्रूज पर से मादक पदार्थ जब्त होने के मामले मिली जमानत से संबंधित शर्तों में संशोधन करने की अपील की।

बता दें कि आर्यन खान कुछ वक्त पहले तक क्रूज ड्रग्स केस को लेकर खूब चर्चा में बने हुए थे। आर्यन ने 22 दिन जेल में गुजारे थे, वहीं उसके बाद उन्हें सशर्त जमानत मिली थी। ऐसे में अब आर्यन की ओर से हाई कोर्ट में जमानत की शर्तों को संशोधन करने की अपील की गई है। बता दें कि आर्यन के आवेदन में इस शर्त से छूट देने की अपील की गई है कि उन्हें प्रत्येक शुक्रवार को नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो (एनसीबी) के दक्षिण मुंबई स्थित कार्यालय में पेश होना होगा। इसके साथ ही आवेदन में कहा गया है कि चूंकि जांच अब दिल्ली एनसीबी के विशेष जांच दल को सौंप दी गई है, इसलिए मुंबई कार्यालय में उनके पेश होने की शर्त में ढील दी जा सकती है।

एक रिपोर्ट के मुताबिक आर्यन खान के वकील ने अपील में बताया कि आर्यन 5 नवंबर, 12 नवंबर, 19 नवंबर, 26 नवंबर, 3 दिसंबर और 10 दिसंबर को एनसीबी के सामने पेश हुए थे। इसके साथ ही ड्रग्स केस के दूसरे आरोपी मनीष का जिक्र करते हुए आर्यन के वकील ने कहा कि उन्हें एनसीबी के सामने हर हफ्ते पेश नहीं होना होता है, ऐसे में आर्यन के साथ भी ऐसा भी होना चाहिए। रिपोर्ट के मुताबिक आर्यन की याचिक में लिखा है कि वो एक स्टूडेंट हैं और एक अच्छे परिवार से ताल्लुक रखते हैं, जिसकी समाज में अच्छी छवि है, ऐसे में वो भी एक सम्मानित और प्रतिष्ठित जिंदगी जीना चाहते हैं। आवेदन में यह भी कहा गया है

तानाशाही के खिलाफ पहले सम्मेलन पर लोकतंत्र बचाने की अपील

नई दिल्ली। पहली ह्यसमिट फॉर डेमोक्रेसीह्व के उद्घाटन भाषण में अमेरिकी राष्ट्रपति ने कहा कि दुनियाभर में आजादियां ऐसे नेताओं के कारण खतरे में हैं जो अपनी ताकत को बढ़ाने में लगे हैं और दमन को सही ठहरा रहे हैं.अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडेन ने दुनिया के सौ से अधिक देशों के नेताओं से अपील की है कि लोकतंत्र को मजबूत करें, मानवाधिकारों और स्वतंत्रताओं की रक्षा करें क्योंकि मौजूदा दौर में एकाधिकारवादी सरकारें लोकतंत्र को बड़ी चुनौती दे रही हैं. अपनी तरह के इस पहले सम्मेलन में बाइडेन ने कहा, ₹हम इतिहास में एक दोराहे पर खड़े हैं. क्या हम अधिकारों और लोकतंत्र को पीछे खिसक जाने देंगे? या हम मिलकर एक सोच और हौसले के साथ इंसान और इंसानी अधिकारों को आगे की ओर ले जाएंगे?ह्व पहला ऐसा सम्मेलन अमेरिका ने पहली बार ह्यसमिट ऑफ डेमोक्रेसी' नाम से इस सम्मेलन का आयोजित किया है जिसमें दुनियाभर से सौ से ज्यादा नेताओं को बुलाया गया है. इस सम्मेलन को बाइडेन के फरवरी में किए एक ऐलान से जोड़कर देखा जा रहा है जिसमें उन्होंने कहा था कि वह अमेरिका को दुनिया के नेतृत्व की भूमिका में फिर से ले जाएंगे और तानाशाही शासकों को करारा जवाब देंगे. 111 देशों के नेताओं को संबोधित करते हुए बाइडेन ने कहा, ₹लोकतंत्र कोई हादसा नहीं है।

हमें इसे हर पीढ़ी के साथ बदलना होता है. मेरे विचार से यही हमारे वक्त की सबसे बड़ी चुनौती है.ह्व बाइडेन ने चीन या रूस जैसे देशों की ओर सीधे कोई उंगली नहीं उठाई, लेकिन कई विशेषज्ञों का मानना है कि यह सम्मेलन ऐसी ही ताकतों के खिलाफ जनमत बनाने का एक जरिया है. इस समझ की वजह यह भी है कि रूस और चीन के नेताओं को इस सम्मेलन में नहीं बुलाया गया है. यह बात कई मंचों से कही जा चुकी है कि दुनिया इस वक्त सबसे ज्यादा देशों में लोकतंत्र पर खतरा मंडरा रहा है। हाल ही में इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट फॉर डेमोक्रेसी ऐंड इलेक्टोरल असिस्टेंस ने एक रिपोर्ट में कहा था कि म्यांमार, अफगानिस्ता और माली में हुए तख्तापलट ने तो लोकतंत्र को नुकसान पहुंचाया ही है, हंगरी, ब्राजील और भारत भी उन देशों में शामिल हैं जहां लोकतंत्र की जड़ें कमजोर हुई हैं. कमजोर होते लोकतंत्र लोकतांत्रिक मूल्यों पर काम करने वाली संस्था आइडिया के मुताबिक ऐसे देशों की संख्या जिनमें लोकतांत्रिक मूल्य खतरे में हैं इस वक्त जितनी अधिक है उतनी कभी नहीं रही. इसकी एक रिपोर्ट के मुताबिक लोक-लुभावन राजनीति, आलोचकों को चुप करवाने के लिए कोविड-19 महामारी का इस्तेमाल, अन्य देशों के अलोकतांत्रिक तौर-तरीकों को अपनाने का चलन और समाज को बांटने के लिए फर्जी सूचनाओं का प्रयोग जैसे कारकों के चलते लोकतंत्र खतरे में है. आइडिया ने 1975 से अब तक जमा किए गए आंकड़ों के आधार पर यह रिपोर्ट तैयार की है।

रिपोर्ट कहती है, ₹पहले से कहीं ज्यादा देशों में अब लोकतंत्र अवसान पर है. ऐसे देशों की संख्या इतनी अधिक पहले कभी नहीं रही, जिनमें लोकतंत्र में गिरावट हो रही हो₹ रिपोर्ट में ब्राजील, भारत और अमेरिका जैसे स्थापित लोकतंत्रों को लेकर भी चिंता जताई गई है। रिपोर्ट कहती है कि ब्राजील और अमेरिका में राष्ट्रपतियों ने ही देश के चुनावी नतीजों पर सवाल खड़े किए जबकि भारत में सरकार की नीतियों की आलोचना करने वालों को प्रताड़ित किया जा रहा है. अमेरिका ने कहा है कि दुनिया में लोकतंत्र को मजबूत करने के लिए सरकार कांग्रेस के साथ मिलकर काम कर रही है ताकि 42.44 करोड़ डॉलर की राशि उपलब्ध करवाई जा सके. इस राशि का इस्तेमाल कई कदमों के लिए किया जाएगा जिनमें स्वतंत्र न्यू मीडिया को मजबूत करना भी शामिल है।

अखंड भारत संदेश के लिए (स्वामी श्री योगी सत्यम योग सत्संग समिति) क्रियायोग आश्रम एवं अनुसंधान संस्थान झूसी प्रयागराज उत्तर प्रदेश 211019 से प्रकाशित एवं विपिन इंटरप्राइजेज 1/6C माधवकुंज, कटरा प्रयागराज से मुद्रित।

मुद्रक/प्रकाशक

स्वामी श्री योगी सत्यम योग सत्संग समिति पी.आर.बी .एक्ट के अंतर्गत समाचारों के चयन के लिए उत्तरदाई। इस समाचार पत्र में प्रकाशित समस्त समाचारों से संबंधित विवादों का न्याय क्षेत्र प्रयागराज होगा।

UPHIN 29506

दो ट्रकों के बीच भिड़ंत से मची चीख-पुकार, 49 लोगों की मौत और 58 घायल

मैक्सिको। मैक्सिको में गुरुवार की देर रात दो ट्रकों के बीच ऐसा हादसा हुआ कि चारों ओर चीख-पुकार मच गई। नॉर्थ अमेरिकी देश मैक्सिको के चियापास राज्य के दक्षिणपूर्वी मैक्सिकन शहर तुक्स्टला गुटिरेज के पास दो ट्रक आपस में टकरा गए, जिसमें 49 लोगों की मौत हो गई और 58 अन्य घायल हो गए। यह जानकारी रेस्क्यू टीम ने दी है। इस दर्दनाक दुर्घटना में शामिल ट्रकों में से एक में सेंट्रल अमेरिका के 100 से अधिक प्रवासी सवार थे। प्रारंभिक जानकारी के अनुसार इस हादसे में 58 लोग घायल हुए हैं, जिनमें तीन गंभीर रूप से घायल हैं। इन्हें शहर के अस्पतालों में भर्ती कराया गया है। बचाव टीम ने गुरुवार देर रात अपने फेसबुक पर सूचना दी कि इस हादसे में 49 लोगों की मौत हो गई है। चियापास के गवर्नर रटिलियो एस्कंडन ने पीड़ितों के परिवारों के प्रति संवेदना व्यक्त की और दुर्घटना के लिए जिम्मेदार लोगों के खिलाफ कार्रवाई की कसम खाई। बता दें कि अबतक मृतकों की पूरी तरह से पहचान नहीं हो पाई है। पहचान होने और पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट आने के बाद ही शवों को उनके परिजनों को सौंपा जाएगा।

भारत में वांटेड आतंकवादी कुलदीप के प्रत्यर्पण की अपील ब्रिटेन की अदालत ने खारिज की

लंदन। इंग्लैंड के हाई कोर्ट ने गुरुवार को भारतीय प्राधिकारियों की वह अपील खारिज कर दी जो मजिस्ट्रेट अदालत के फैसले के विरोध में दायर की गई थी। मजिस्ट्रेट अदालत ने मानवाधिकार के आधार पर कुलदीप सिंह के प्रत्यर्पण के अनुरोध निरस्त कर दिया था। कुलदीप सिंह उर्फ कीपा सिद्धू भारत में प्रतिबंधित आतंकवादी संगठन खालिस्तान जिंदाबाद फोर्स (डेंत्र्) का सदस्य होने के कारण वांछित है। सिंह पर 2015-16 में पंजाब में अपने साथियों के साथ मिलकर आतंकी गतिविधियों की साजिश रचने और अंजाम देने का आरोप है।

इसमें तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल और उपमुख्यमंत्री सुखबीर सिंह बादल की हत्या की साजिश रचने का आरोप भी शामिल है। कुलदीप सिंह (44) पर पंजाब में युवाओं को पैसे देकर प्रतिबंधित संगठन केजेडएफ में उनकी भर्ती करने और एक गुरुद्वारे में अलगाववादियों के लिए बैठक करने का भी आरोप है। प्रत्यर्पण मामले की सुनवाई करते हुए यहां वेस्टमिन्स्टर मजिस्ट्रेट की अदालत के जज गारेथ ब्रैंस्टन ने मानवाधिकार का हवाला देते हुए जनवरी में सिंह के प्रत्यर्पण के अनुरोध को खारिज कर दिया था। हाई कोर्ट के न्यायाधीशों निकोला डेविस और पुष्पिंदर सैनी ने मजिस्ट्रेट अदालत का आदेश बरकरार रखा।